

यन्यकार और प्रकाशक— ध्रीवेष्ण्य प्रमहंस जानकीयल्लभदास (नागर – कवि)



वसवार । इ_{र्व}ा भारतगरहरू (न् ०)

्रिश्याना स्वर्णानकार स्वरूप्तिक के 1

4929

* भूमिका *

यह बितदान निषेध पुस्तक सम्वत् १९८१ में ३० पृष्ठ तक छपकर किसी कारण से बन्द हो गई थी, फिर सम्वत् १९९० में अन्त तक अपि दो गई। इस पुस्तक में तीन प्रकार के बितयों (इत्यायों) का निषेध है। याने देवीबितनिषेध पृष्ठ १ पंक्ति १ से पृष्ठ ७ पंक्ति २१ तक। यज्ञवितिनिषेध पृष्ठ ८ पंक्ति १ से पृष्ठ ७५ पंक्ति ९ तक । श्राद्धवित निषेष पृष्ठ ७५ पंक्ति ११ से पृष्ठ ११९ मंकि ६ तक । धर्मनिरीच्या विषय पृष्ठ ११९ पंक्ति ७ से पृष्ठ २२० पंक्ति १७ तक । बीच बीच में सामान्यता भी मांस भन्नण निषेध है। श्रीर एक निषेध के श्रम्तर्गत दूसरा निषेध भी श्रागया है। बिहार बङ्गाल उड़ीसा ऋादि देशों में मनुष्य, विशेष कर ब्राह्मण इस समय वे प्रयोजन के विचारे दीन निर्वेत पशु पत्ती मछली भादिकों को मार काट खाजाते हैं। ऐसे श्रज्ञानी श्रौर पशुम्बभाव वाते मनुष्यों को मैंने यह पुस्तक लिखी है। यह पुस्तक परिड़त और मूर्क सबके काम योग्य है, वैदिकी हिंसा हिंसा न भवति इस की शास्त्राधार पर अच्छी तरह मीमांसा (तर्क) की गई है। यह. पुरतंक वैदसवों का आधार, श्रेव शाक्तोंका सुधार श्रोर जिज्ञासुयों

[昭]

का गुरु है, पुनः पिडतों का सहोदर भाता श्रीर राज्ञसों का शत्रु है, इसमें कोई संदेह नहीं।

हिंसकों से बाधित सब जीवों की सबको रज्ञा करना चाहिये, यही धर्म यही ज्ञान यही उत्तम भगवद्भक्ति है झौर यही मानदान है।

> रह्मन्ति जंतवः सब्बें हिंसकं वाधयंति च। त्रैलोक्यमस्थिलं दृत्वा यत्फलं बेद पारगे ६। तत्फलं कोटि गुणितं लभते ऽहिंसको नरः। सनसा कर्मणा वाचा सर्व्वभूत हिते रताः १०। इति लिङ्गपुराण पूर्वभाग अध्याय ५८।

एकस्मिन् रिचिते जीवे त्रैलोक्यं रिचितं भवेत् १७। इति शिवपुराणं हृद्रमंहिता खर्ड ५ ऋष्याय ५। पृष्ठ ७ पंक्ति ३ से पंक्ति ८ तक भी देखो।

चक्त स्रोकों का अर्थ देवीवित पाखरह माहात्म्य में देखो। मतुष्य को अहिंसा ज्ञान का प्रचार अवस्य करना चाहिये (गीता १८। ६९) क्योंकि इससे संसार का सुधार होता है, वह ज्ञान चाहै मुहजबानी व्याख्यान में हो वा लेख व्याख्यानमें हो। देखिये भारत की खियों का साहस और स्वकर्म, जैसे किंवित्— लेख व्याख्यान याने पुस्तकहर में, लेखिका श्रीमती हरप्यारी देवीजी, परिडत श्रीघासीरामजी की पुत्री, मुहल्लावमनपुरी वांम-बरेली । १ विचारकुसुम । २ देवकीवसुदेव विवाह (श्रीकृष्णजन्म) श्चाल्हखण्ड पहिला भाग । ३ श्रीकृष्ण बालचरित्र श्चाल्हखण्ड द्सराभाग । ४ श्रीकृष्ण गेंदलीला । ५ शङ्कर विवाह । श्रीमती चमेलीकुंचरि वाई जी, परिखत श्री रामदीनजी का मकान मुहङ्खा बमनपुरी- वाँसंब्ररेली ने श्रीकृष्ण सोलहपदी पुस्तक सिखी है। यदि पुरुष, स्त्रियों के बराबर ही साहस करें तो भारत में बहुत कुछ सुधार हो सक्ता है। श्रीमान बावू रामरेखापसादजी बी० ए० बी० एत० घकीत श्रीवास्तव्य कायस्थ मुकाम शुभङ्करपुर, पोष्ट विशुनद्तपुर, जिला मुजफ्फरपुर (बिहार)। श्रीमान् बावृ इकवालवदादुरजी फरीदपुर, जिला बरेली हाल-हेडमान्टर निरञ्जन पञ्लिक हाईस्कृल बरेली (यू॰ पी०)। इनके सरीखा सबको ऋहिंसा से प्रीति करना चाहिये। यह ध्यान बहै कि श्रहिसात्रादर्श श्रीर बामसैथिल-परिचय दोनों पुस्तकें यन्त्रालय से लौट आईं नहीं छपी।

आश्विन कृष्ण ९ सम्वत् १९९२ विकमीय परमहंस जानकीवरताभदास (नागर-कवि) चित्रकूट, जिला बाँदा

पुस्तक मिलने का पता:-

१ - श्रीमान्!

बाबू रामरेखाप्रसादजी बी. ए., बी. एल. वकील सुहला इसलामपुर, सुजपफरपुर (बिहार)।

२-श्रीमान्!

बाबू इकवालवहाहरजी हैडमास्टर

निरञ्जन पञ्जिक हाईस्कूल बरेली (संयुक्तप्रदेश)।

३- मैनेजर,
स्कूल बुकडिपो अयोध्याजी
जिला फैनाबाद (यू॰ पी०) ।

अनुबन्ध चतुष्ट्य।

(१) विषय—इस विलिदान निजेश में जो देवी देवतायों को लोग पशु बिल देते हैं और आद आदि यजों में भी हत्याकांड को धूर्त ब्राह्मणों ने मुक़र्रर किया है उसको खंडन है।

(२) प्रयोजन—इस संसार में सकत जीवधारी जीव सुख पूर्व करहें, किसी को किसी से किसी प्रकार का दुख न पहुँचे इस प्रत्थ का प्रयोजन है।

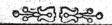
(३) सम्बन्ध—यह त्रन्थ सिर्फ अहिसाने सम्बन्ध रखता है।

(४) अधिकारी—इस प्रत्यके हिसक, मांसस्रावेदास्रे,निर्दयी, प्रद्यासु राक्षस पिशाच अधिकारी हैं।

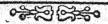
सुचना—सामान्यता मछली मांस खाना खंडन और श्रांद यह मैं पशुका काटना खंडन विशेष कपमें जानना हो तो जो मैं ने "अहिंसा सादर्श" और "वाम मैथिल परिचय" नामक दो पुस्तिका निक्षी हैं उनसे जानेंगे। यह दोनों पुस्तिका यन्त्रस्थ हैं।

इन दोनों प्रत्थों में "जिस प्रकार इस ग्रन्थ में पुस्तक का नाम अध्याय का नंबर इलोक का नंबर साफ साफ बता दिया है (इलोक का नंबर इलोक के साथ हो साथ है) इसी प्रकार बताया गया है " मेरे लिखे प्रन्थों से चाढे कम पढ़े हों वा विशेष विद्वान हों सब को सुमीतां होगा।

परमहंस— फाल्गुन पूर्णिमा जानकीच्छभदास (नागर-कवि) संबत् १९८१ विक्रमीय वित्रकृष्ट ।



Printed by G. D. Sinha, Manager, Shri Sita Ram Press, Shri Ayodhya Ji.



क्ष हरि ओ३म् क्ष

चक्रै बिट्यान निषेध क्रै[®]

श्रीवैष्णव परमहंस जानकीवछ्भ दास

(नागर-कवि) कृत + समाहति ।

—4≘k—

॥ श्रीसदाशिव उवाच ॥

"नीवानुकम्पां विज्ञातुं ततो दगीं सदाशिवः।
पप्रच्छ परम पीत्या गढ़ मेतद्वचो मुदा।।
सन्वे विष्णुमया जीवास्तवद्भक्ताञ्चकथं शिवे।
श्रुतंमया तवोद्देशे कुटर्जुः कामनयावधम्।
महान् सन्देह इति मे ब्रूहि भद्रे स्रतिञ्चतम्।।
श्रुक्तरी तद्वचः श्रुत्वा शिव वक् विनिर्गतम्।
भीतात्यन्वं हि ब्रह्मचें प्रत्युवाच सदाशिवम्।।

॥ श्रीपार्व्वत्युवाच ॥

ये ममार्च्चनमित्युक्त्वा पाणि हिंसन तत्पराः। तत्पूजनं ममामेंध्यं यहोषात्तद्योगतिः॥ मदर्थे शिव कुर्व्धन्ति तामसा जीवघातनम्। आकल्प कोटि निरचे तेषां बासो न संग्रयः ॥ मम नाम्नाथवा यत्रे पद्य हत्यां करोति यः। कापि तिबद्कतिनीस्ति कुम्भीपाक मवाप्नुषात्।। देवे पेत्रे तथात्मार्थे यः कुर्व्यात् प्राणि हिंसनस् । कल्प कोटि शतं शस्भो रीरवे संवसेत् श्रुवस्।। यो मोहान्मानसैर्देहिहत्यां कुळीत् सदाभिव। एक विश्वति कृत्यक्च तत्त्वद्योनिष्यः। जायते ॥ यज्ञे यज्ञे पशून् इत्वा कुटयीत् शोणित कईमस्। स पचेन्नरके तावद् यावल्लोमानि तस्य वै।। हन्ता कर्चा तथोत्सर्ग कर्ता धर्ता तथैव च। तुल्या भवन्ति सर्वे ते भ्रुवं नरक गायिनः॥ ममोद्देशे पशून्हत्वा स रक्तं पात्रसत्सनेत्। यो मूढ़ः स तु प्रयोरे वसेद् यदि न संशयः॥ देवतान्तरं मन्नाम व्यक्तिन स्थेच्छया तथा। हत्वा जीवांश्चय यो भक्षेत् नित्यं नरक माप्नुयात्।। सूमे वड ्वा पशून् इत्वा यः कुरयीद्रक्त कर्दमम् । तेन चेत् पाष्यते स्तर्गो नरकं केन गम्यते ॥

एपदे प्टा वृषे हन्ता कर्ता धर्ता च विक्रयी। ज्त्सर्ग कर्ती जीवानां सर्वेषां नरकं भवेत्।। मध्यस्थस्य वधायापि प्राणिनां ऋय विऋये। तथा द्रव्हरूच स्नायां कुंभी पाको भवेर् ध्रुवस्।। स्वयं कामाशयो भृत्वा योऽज्ञानेन विमोहितः। इन्त्यन्यान् विविधान् जीवान् कर्य्यान् पन्नाम सङ्गर । तद्राज्य वंश संपत्ति ज्ञाति दारादि सम्पदास्। अचिराव्दै भवेनाशो मृतः स नर्कं ब्रजेत् ॥ देव यडे पितृश्राद्धे तथा माङ्गल्य कम्मीर्ण। तस्येव नरके बासमे यः कुर्याज्जीव घातनम् ॥" तथा-

⁴⁴ मद्व्याजेन पशून् इत्वा यो भक्षेत् सह वन्धुभिः तद्गात्र लोम संख्याब्दैरसिपत्र वने वसेत्।। आवयोरन्य देवामां नाम्ना च पर कर्म्मणि। यः संपोष्य क्यून् इन्यात् सोऽन्यतामिस्रमाप्नुयात्।। पशून इत्वा तथा त्वां मां योऽच्चीवन्मांस शोणितैः। तावेचनाके वासो यावच्चन्द्र दिवाकरौं॥ निर्व्धिष्ट भस्म तुल्यं तत् वहु दृत्येण यत् कृतम्। यस्मिन् यत्ने प्रभो ज्ञम्भो जीव हत्या भवेद् ध्रुवम्,॥ यज्ञमारभ्य चेत् शकः कुर्याद्वेपशु घातनम्। स तदाथोगितं गच्छेदितरेषात्र का कथा।।

आवयोः पूजनं मोहाद् वे कुर्व्युमीं स शोणितैः पतन्ति कुन्भीपाके ते भवन्ति पश्चवः पुनः॥ फल कामास्तु वेदोक्तैः पशोरालंभनं मस्ते । पुनस्तत्तत् फलं भूक्त्वा ये कुर्विति पतन्त्यधः॥ स्वर्ग कामोऽ अमेधं यः करोति निगमाज्ञया। तर्भोगान्ते पतेद्भ्यः स जन्मानि भवार्णवे ॥ ये इताः पश्चवो लोकैरिह स्वार्थेषु कोविदैः। ते परत्र तु तान् इन्युस्तथा खड्गेन शङ्कर।। आत्म पुत्रं करुत्रादि स संपत्ति कुळेच्छया । यो इरात्मा पशून् इन्यादात्मादीन् घात्वेत् स त॥ जानन्ति नो वेद पुराण तत्त्वं ये कर्मीठाः ॥ पण्डित मान युक्ताः । छोकाधमास्ते नस्के पतन्ति कुर्व्धन्ति म्लीः पद्य घातनश्चे त्।। येऽज्ञानिनो मन्द्धियोऽकृतार्था भवे पशुं घ्रन्ति न धर्मशास्त्रम् । **जानन्ति नाकं नरकं न** मुक्ति गच्छन्ति धोरं नरकं नरास्ते ॥ छुखा अकाष्णी न विदन्ति शाक्ता न धर्मी। मार्ग परमार्थ तत्त्वम्।

* कर्मशूरा, इत्यमरः। †अहिसा और उपनिषत्, इति शब्द काल्पद्रमधर्मशब्दान्तर्गति-

षापं न पुण्यं पद्म घातका वे पूर्योदवासा भवतीह तेषास्।।

मेदिनी, से, १६ का दचन। धर्म के १० अंग यथा:-

बहाबर्थिंग सत्येन तपसा च प्रवर्तते। दानेन नियमे नापि क्षमा शौचेन बहुभं॥ अहिंसया स शान्या च ग्रस्ते ये नापि वर्तते। एते ईश भिरङ्गे स्तु धर्ममेव प्रस्चयेत्॥ इति शब्दकल्पद्रुम धर्मशब्दान्तर्गत पाद्मभूमि खंड का बचन।

अहिंसा सत्यमस्तेयं दानं क्षांतिर्दमः शमः। अकार्पण्यं च शौचं च तपश्च रजनीचर १। दशांगी राक्षस श्रेष्ठ धर्मा सौ सार्ववर्णिकः। ब्राह्मणस्मापि विहिता चातुराश्रम्य करपना २। इति वामनपुरास्

अध्याय १४ ।

मृह्स के व्यर्ध कर्म यथा :--

वृथादनं वृथा दानं वृथा च पग्न मारसम्। न कर्तस्यं गृहस्थे न वृथादार परिग्रहः ४१। वृथादनान्नित्य हानिष् था दानासनक्षयः। वृथा पश्चाः प्राप्नोति पातकं नरकार्थियत् ४२। संतत्याहानिरश्चात्या वर्णशंकर तोभयम्। भेतत्यं च भवेह्नोकेवृथादार परिग्रहात् ४३। परस्वे परदारेषु न कार्यान्बुद्धिहत्तमेः। परस्वं नरकार्येव परदाराश्च मृतवे ४४। ने क्षेत्यरिख्यं नग्नांन सं भाषेततस्करान्। उद्वयादर्शनं स्पर्शे संभाषां च विवर्जयेत् ४५। नेकास्तवे तथास्थेवं सोदर्या पर-जायया। तथा सापन्य मातुश्च तथा स्वदृहित्विष ४६। न च सायोत वै नग्नो न शयीत कदाचन्। दिग्वास सोऽपि न तथा परिश्रमण-मिन्यते ४७। इति वामनयुराण अध्याय १४। जीवानु कम्पां न विद्नित यूढ़ा
भ्राग्ताञ्च चेऽसत्यिको न धर्माम् ।
स्मांची भवे प्राणि वधं न कुट्यु स्ते यान्ति मन्यीः सळ रौरवाष्ट्यम् ॥
ततस्तु खळ जन्तूनां घातनं नो किष्णित ।
युद्धात्मा धर्मवान् ज्ञानी प्राणान्ते नैव मानवः ॥
यदीच्छेद्दात्मनः क्षेमं त्यक्त् वा ज्ञानं तदानरः ।
जीवान् कानपि नो इत्यात् सङ्कटापन्न एवचेत् ॥
सम्पतौ च विपचौ वा पर ठोकेच्छकः पुमान् ।
कदाचित् प्राणिनो इत्यां न कुट्यांचत्वित् छधीः॥

परदार षुद्ध की गति यथा :—
पर्व मैथुनिनः पापाः परदार रताश्चये । तेविह्न ततां कृदाग्रामाठिंगं ते च शाल्मलीम् ३० । इति वामनपुराण अध्याय १२ ।
राजाको किसीकी कन्याके दृषित करनेके विषयमें यथा :—
प्रनर्भूपतयो ये च कन्या विध्वंसकाश्चये । तद्गर्भस्रावकृद्यश्च
कृमीन्मक्षेत्पपीलकाः ३५ । इति वामनपुराण अध्याय १२ ।
परस्त्री स्मरण से पाप लगता है यथा :—
परस्त्री स्मरणे पापं कि पुनर्दर्शनादिवु ७० । इति आदि पुराण अध्याय १८ ।

परदार प्रसंग पाप है—देवी भागवत स्कंघ ६ अध्याय २४ स्टोक ४६ देखो। मानवो यः परत्रे ह तर्नुमिच्छेत् सदात्रिव। सर्व्य विष्णुमयत्वे न न कुट्यीत् प्राणिनां वधम्।। वधाइक्षति यो मत्यो जीवान् तत्वज्ञ धर्मीवत्। किं पुण्यं तस्य वक्ष्ये ऽहं ब्रह्माण्डं स तु रक्षति॥ यो रक्षेत् घातनात् शम्भो जीव मात्र दया परः। कृष्ण प्रियतमो नित्यं सर्व्य रक्षां करोति सः॥ एकस्मिन् रक्षिते जीवे त्रं लोक्यं तेन रक्षितम्। वधात् शक्कर वै येन तस्माइक्षेत्र घातयेत्॥"

तथा-

"पद्य हिंसा विधिर्धत्र पुराणे निगमे तथा।

उक्तो रजस्तमोभ्यां स केवलं तमसापि वा।।

नरक स्वर्ग सेवार्थ संसाराय मवर्तितः।

यतस्तत् कर्म्म भोगेन गमनागमनं भवेत्।।

सत्येन सास्वतग्रन्थे स विधिनैंव शक्तर।

पर्वे नाना विधं कर्म्म पशोरालभनादिकम्।

कामाशयः फलाकाङ्की कृत्वाज्ञानेन मानवः।।

पञ्चाल् ज्ञानासिनाच्छित्वा भ्रान्त्याशांतामसी सदा

यमभीतिहरं भक्त्या यदि गोविन्दमाश्रयते॥"

इति शब्दकरपद्रम बल्टिः शब्दान्तरगत पाद्योत्तर स्वल्ड १०४।

१०५ अध्याय का वचन ।

(नतु "मा हिस्यान् सर्व्या स्तानि" "अहिसापरमो बन्मै:।" इत्यादि वचनास कर्च ब्येन सर्व्या हिंसा कथं तहि हिंसा पवित्तः ग्रुमाहष्ट जनकत्वे न चाले पूर्वादेष्टा अतोऽत्रोच्यते । अथ वैघ हिसा विचारः । 'मा हिंस्यात् सर्व्वी भूतानि, इत्यत्र सर्व्य राज्यस्य व्याप-कार्थ परतया एतदि घ मनुहाङ्च 'दायन्य' श्रेत माहभेत, इत्यादि विधिविषया माप्ते रगला वेधारितिक विषयत्वं सन्वीः सर्व्वीण छन्द्रि वेटानेन तत्पदं विद्यम्। यद्पि नाना दर्शन टीका कृष्टिभिवीचरणीत मिन्नैस्तन्दकौगुचास् अभिहतं न च भा हिंस्यान् सेकी जुतानि, इति सामान्य श्रोसं विशेष शास्त्रेण अधियोपीय' पशुमालभेत, इत्यनेन वाध्येत इति वाच्यं विसेवा-भावात्। विरोधे हि वलीयसा दुर्व्वलं वाध्यते। न चास्ति विरोदः भिन् विषयत्वात् । तथाहि 'मा हिंस्यात् इति निषेधेन हिसायाः अनर्थ हेतु भावो झाय्यते न पुनरक्रश्वर्थत्वगणि । न चानर्थ हेतु त्वकतुं पकार कत्वयोः कव्चिद्स्ति विरोधः। दिसा हि पुरुषस्य दोष मावस्यति ऋतोक्चोप करिष्यतीत्यन्तेन तद्य सांख्य नथे। मीं मांसक मते तु विरोध एवं तथाहि गरुनये न खु सर्वे भूत हिंसाऽभाव विषयकं कार्य्य इति निषेध विध्यर्थस्य बाधं विना अग्निषोमीय पश्वालम्भन विषयकंकार्य्य मितिभाव विध्यर्थ उपपचते। भट्टनये तुं अङ्गे यथा तथास्तु । न च मुख्य पशुयागे पुरुषार्थक पशु हिसन स्यार्थ साधनत्वं अनर्थसाधनत्वञ्चोप पद्यते विरोधात् । वस्त तस्तु अङ्गेपि विरोधोऽस्थेव कुतो विधेरेष स्थावो यः स्वेविषय स्य साक्षात्परमपरया वा पुरुषार्थे साधनत्वमवगमयति अन्यथाङ्गा-

नां प्रधानोपकार कत्यमपि नाङ्गीकियेत। अर्थ साधनत्यं वस्त्रव् निष्टाननुबन्धीष्ट साधनत्वं अनर्थ साधनत्वं वस्त्रव्दिन्ष्ट साधनत्वं न चानयोरकेत्र समावेश इति। अत्तप्योक्तं 'तस्माद् यक्ते वधोऽ-वधः, इति। नन्वेवं 'क्येनेनाभिचरन् यजेत, इत्यत्र क्येनस्य शत्रु वधाऽ-वधः, इति। नन्वेवं 'क्येनेनाभिचरन् यजेत, इत्यत्र क्येनस्य शत्रु व वस्त्र रूपेष्ट साधनत्वमवगतं 'अभिचारो यूस्त्र कर्मां च।, ११।६३। इति मनुना उपपातक गण मध्ये पठात् अनिष्ट साधनत्वमवगत्रम् । तदेतत्कथम्रपप चतामितिचेन्मैवं 'आततायिनमायान्तं इन्या देवा विचारयन्।, ८।३५०। इत्येक वाक्यतया आततायिस्थले इष्ट साधनत्वं अनाततायिस्थले तूपपातकत्वेन वस्त्रवदिनष्ट साधनत्व-मिस्य विरोध एव॥" इति शब्दकरुपद्रुम चलिदानं शब्दान्तरगतः तिथितत्व का वचन।)

सब प्राणियों में विष्णु परिपूर्ण हैं यथा:— सर्व भृतमयो विष्णुः परिपूर्णः सनातनः ३३। अध्याय १६। सर्वविन्वात्मकं विष्णुं सर्व लोकेक कारणस् ३४। अध्याय ३२। इति नारदीयपुराण पूर्व खण्डाः

आसीनः सर्व देहेख ४९। इति वामन पुराण अध्याय ९४। हरिः सर्वेषु भृतेषु भगवानास्त ईश्वरः। इति भूतानि मनसा कामैस्तैः साधु मानय त् ३२। इति भागवत स्कन्य ७ अध्याय ७ ।*

ा । दिनो ना न्निष्णऽज्ञ ना पृथिक्याम् हो ना निष्णऽज्रो

रन्तरिक्षात् १९।

इति यजुर्वेद अध्याय ५।

जो यह में पशु हत्या करते हैं वे बड़े निर्द्यी होते हैं और नरकों में जाते हैं, वही नरकोंसे निकल पिशाच राझसादि योनियोंमें जाते हैं। पाखण्डी धूर्त ब्राह्मण पण्डितों ने हिंसा बाला यह चलाया है। वेदों ने कहीं नहीं कहा जितने कर्म हैं सब हिंसा रहित कहें गये हैं। घेदशालों में धूर्तबाह्मणों ने हिंसा मिलाई है वे लोग लोभादि से भस्यामध्य खाते हैं, देवी देवतोंके लिये तंत्रादि प्रन्थोंमें इन्ही लोगों ने पशु विलक्षी व्यवस्था देडाली है, इससे सनीत्नामिलंबी सज्जनलोग इनसे खुवा छूतादिका व्यवहार न करों। अब सर्वथा यहमें पशु विलिय करते हैं यथा—

यत्र सञ्द का अर्थ—अहिंसा होता है थया :—

अमरकोष द्वितीय कांड सातवें बहावर्ग के श्लोक १५ में लिखा है कि—यज्ञः सर्वोऽध्वरो अर्थात् यज्ञ कां दूसरा नाम अध्वर है पुनः

^{*} रहोकोंका नम्बर रहोकोंके लाथ ही लाथ है। यदि मूलप्रनथ में रहोक वा अध्याय अपने खान पर न मिले तो दश पांच रहोक वा दोसार अध्याय सागे पीछे नजूर फेर लेंगे।

यही वेदांग नैधंदु अध्याय ३ खंड१७ में लिखा है और अध्वर शब्द कां अर्थ अिंसा होता है, वयोंकि वेदांग निरुक्त मैगम कांड (पूर्वपट्क) अध्याय १ पाद ३ खंड ८ में यह लिखा है कि— अध्वरहति यज्ञनाम ध्वरितिहिंसा। कमीतः मितिषः अर्थात् यज्ञ का नाम अध्वर है और जो हिसा का निर्वेध करें उसे अध्वर कहते हैं।

वेदमें भी अध्वर का अर्थ अहिंसा लिखा है यथा :—

अम्बयो यन्त्रध्वभिर्जामयो अध्वरीयताम् । दुश्चतीमधुना पयः १।

इति अधवंवेद कांड १ अनुवाक १ स्क ४।

अर्थ— (अम्बयः) पानेयोग्य मातायं और (जामयः) मिळकर भोजन करने हारी, बहिने [बा कुल स्थियां] (मधना) मधुके साथ (पयः) दूधको (पृश्चतोः) मिळाती हुई (अध्वरीय स्थाः स्थान करने हारे यजमानों के (अध्विभः) सन्मार्गोंसे (यिन्द्र मिनः। ११।

नोट— क्या अव कोई विद्वान पेर इति स्कन्ध ६ अध्याय १३।

लिये अध्वर् शब्द का प्रयोग हो उसमें रच्

यज—देव वृज्ञा सङ्घति करण दानेषु, ये होक १३३ और महाभारत भी देखो —। देवीभागवत नंत्रकाः।

जिसमें हिंसा हो वह सत्य सत्य नहीं य पीडयन् २३८। कार हो वह असत्य भी सत्य है यथा— इति मनुस्मृति अध्याय ध्रा यज्ञ में पशु मारने वाला पिशाच चौडाल और महापापी होता है यथाः—

> चक्रु ग्रुम् श इलाती हाहेति जन दुर्वचः । पिशाचोऽयं महापापी करूर कमी दिला कृतिः ३४। यत्स्त्रयं र्व्यस्तं हंतुस्रद्धतः कुळ पांसनः। धिक् चांडाळ कियेतचे पाप कर्य चिक्तीर्षतम् ३८। * इति स्कंध ७ अध्याय १६।

अपनी देह पृष्ट को पर देह हत करते हैं वे वेदिचारीहैं यथाः— रागीणां रोचनार्थाय नोदनेयं विचारय। आत्म देहस्य रक्षार्थं पर देह निक्कंतनम् ४०। इति स्कंघ ७ अध्याय १६।

हिंसा करने वाला रौरवनरक में जाता है यथाः— रौरवेनाम नरके सर्व सत्व भयावहे । इह लोकेऽमनायेतु हिंसिता जंतवः पुरा १० ।

^{*} दुखी की रक्षा करना यह से उयादा है और भयभीत की रक्षा करना इस से भी अधिक है यथा—आर्तस्य रक्षणे पुण्यं यहाधिक मुदाहृतम्। भयत्रस्त दोनस्य विशेष फलइं स्मृतम् ५७ — इति देवी भागवत स्कंघ ३ अध्याय १५।

जो पार्खंडी यज्ञ में पशु मारते हैं वह विशसन नरक में जाते हैं यथाः—

> चे वंभावंभ यजेषु पशून्ध्नंति नराधमाः। तानकुष्मिन्यमभटा नरके वैश्वसे तदा ४७। निपात्य पीडत्वं त्वेवकशाधातेर्दुशसरैः ४८। इति स्कन्ध ८ अध्याय २२।

जो पुरुष या स्त्री देवी देवतों को मनुष्य वा पशु का बिछ देते हैं और मांस खाते हैं वे नरकों में उन्हीं जानवरों से जाये जाते हैं पथाः—

वे वे नरा यजंत्यन्वं नर मेधेन मोहिताः।
सियोऽपि वा नर पश्चं लावंत्यत्र महाखने १०।
पत्रवो निहितास्ते तु यम सद्यनि संगताः।
सैनिका इव ते सर्वे विद्येसित धारया ११।
अविपर्वान्त नृत्वंति गायन्ति बहुषा छने।
यथेह मांस भोक्तारः पुरुषा दाहुरासदा १२।
इति स्कन्ध ८ अध्याय २३।

जी जीवीं का घात करते हैं वे असिपत्र नरक में वास करते हैं यथा:— छिनत्ति जीवं खंगेन दयाहीनः खदाहणः। असिपत्रे वसेन्सोपि यावदिद्राञ्चतुर्दश २।

इति स्कन्ध ९ अध्याय ३४।

मत्स्यपुराण ।

ब्राह्मण को जपयज्ञ करना चाहिये यथा :— आरम्भ यज्ञः क्षत्रस्य हिन्येज्ञा विद्यः स्मृताः । परिचार यज्ञा सूद्राञ्च जप यज्ञाञ्च ब्राह्मणाः ५० । इति अध्याय १४२ ।

यज्ञ की हिंसा अहिंसा नहीं कहाती किन्तु अधर्म कहाती है इससे यज्ञ में हिंसा न करना चाहिये यथा:—

अधर्मी बलवानेष हिंसा धर्मेप्सया तव।
नवः पश्चविधिस्त्व स्टस्तंव यज्ञे स्टरोत्तम १२।
अधर्मी धर्मधाताय पारूधः पश्च भिस्त्वया।
नायं धर्मोद्यधर्मीऽयं न हिंसा धर्म हच्यते।
आगमेन भवान् धर्म पकरोतु यदीच्छति १३।
तस्मान्न हिंसा यज्ञे स्याद्यदुक्त मृषिभिः पुरा।
ऋषि कोटि सहस्नाणि स्वैस्तपोमिदिवं गताः २९।

तस्मांत्र हिंसा यज्ञञ्च प्रशंसन्ति महर्षयः। उञ्छोपूळं फळं शाकसुद्पात्रं तपोधनाः ३०। इति अध्याय १७३।

वामनपुराण।

मनुष्य अपने ही प्राण को त्यागना अङ्गीकार करने परन्तु पर की दिसान करें यथाः—

> वरं प्राणास्त्याच्या न वत पर हिंसात्वभिमता। वरं मौनं कार्वं न च वचनसुक्तः यद् तृतम् । वरं क्लीवैभीव्यं न च पर कलत्राभि गमनं। वरं भिक्षार्थि त्यं न च पर धनानां हि हरणम् २९। इति अध्याय ५९।

मृद्र लोग माया जाल में पड़नेसे मध्यामध्य पेयापेय जीवघात कार्याकार्य गम्यागम्य का स्वरूप कुछ नहीं जानते यथा:—

> भक्ष्याभक्ष्यश्च खादेत पेयापेयश्च तित्पवेत् ८८। जीवानि चैव सततं घातितानि ततस्ततः। कार्योकार्यं न जानीते वाच्यावाच्यन्तयेति च ८९। गम्यागम्यं न जानाति माया जाळेन मोहितः ९०। इति अध्याय १२५।

मनुष्य की अभस्य विलक्षित विलक्षित है, यह श्राब में भी मांस खाना अभस्य ही है भिष्टा मांसादि जो मल है वह किसा मंत्र से भी शुद्ध नहीं हो सकते यथाः—

अभस्यश्चीव वर्जितस् १३५।

इति जध्याय १२५।

वाराह पुराण।

हिंसक ? दुष्ट (सरपादि) योनियों में जन्म केते हैं यथाः— हिंसका दुष्ट योनिजाः ९५।

इति अध्याय १२६।

मांस खानेवाळा प्रेत होता है यथाः—

बृथा मांस रतो निल्यं स चमे तोऽभिजायते ४५।

इति अघ्याय १७४।

जो किसी की दिसा नहीं करता वही पापी से छूटता है यथा:-

अहिसः सर्वमृतेषु तृष्णा क्रोध विवर्णितः ।

शुभ न्यायः सदायज्ञच स पावेभ्यः प्रमुच्यते ३३।

इति अध्याय २१०।

बद्ध पुराण।

जीवों के मारने वाले यमलोक मार्ग में राक्षसों से खाए जाते हैं यथा:—

> घातयन्ति च ये जंतूंस्ताड्यन्ति निरागसः ८९। राक्षसुर्थेक्ष्यमाणास्ते यांति याम्य पथं नराः ९०। इति अध्याय १०५।

नारदीय पुराण।

किसी की दुःख न देना ही सब घर्मी से वड़ा घर्म है यथाः— आनृशंस्यं परो घर्मः * क्षमा च पर्मं वस्त्र् । आत्मज्ञानं परं ज्ञानं सत्यं हि परमं हितम् ४९। इति पूर्व खण्ड अध्याय ६० ।

देवी की पूजा फल फूल समादि से होती है यथा:—

घृतं च शर्करा दुग्धमपूर्णं कदलीं फलम् । शौंद्रं गुडं नारिकेल फलं लाजा तिलं दिव ८५ । पृथुकं चणकं मुद्गपायसं च निवेद्वेत्।

महाभारत वनपर्व अध्याय ३१३ ऋोक ७६ और शुक्र नी बि अध्याय १ ऋोक १५८ में भी ऐसा ही है ।

कामेश्वर्यादि शक्तीनां सर्वासामिप चोदितम् ८६। * इति पूर्व खण्ड अध्याय ९०।

* जो देवी देवतों को पशुकार के खाने को देते हैं उस की हत्या मतुष्य को लगती है और परलोक में दुखों को प्राप्त होतेहैं देवी आदिकों को फल नहीं मिलता क्यों कि वह पूर्वपुष्य से अपने सुख को भोगते हैं और धर्मशास्त्र मतुष्यों कोही बनाहै न कि देवता, पशु, पिक्षयों को क्यों कि मानव धर्मशास्त्र उस का नाम हो है।

वाम मैथिल परिचय से उदुधृत यथाः—

दुर्गी मंदिर की जहां बनवाते नर जोय। वहां कसाई भवन की नहीं ज़रूरत होय। नहीं ज़रूरत होय मनुज तहुँ काटें खस्सी। घनते वहीं चमार खाल खेंचत कस रस्सी। जो नर खाते मांस उन्हों को नर्क! न खर्गी। तह को करें कसाइ जहां है मंदिर दुर्गी॥ बकरी का बचा दुर्गी से कहता है कि:—

भुवनेश्वरि सज्ञान त् अज्ञ नहीं छवछेश।
वकरों के तन खात फिर क्यों मछ भरे विशेष।
क्यों मछ भरे विशेष चाम चर्वी रज हड्डी।
मूत्र मांस गू वीर्य खात तू वन के वड्डी।
किसने देवी कही तुझे डाजान जग भरकी।
हम वकरी के बाल जान क्यों छेवे परकी॥

अर्थ—संसार में जितनी सब शक्तियां हैं, उनकी घी, शक्कर, दूध, युवा, केला,फल, गन्ने का रस, गुड़, नारियल, लाई, तिल, दही, चिउड़ा, चना, मूंग, खोर, (दूध भात) का भीग लगावे। खस्सी (वकरा) आदि पशुओं की हत्या नकरें क्योंकि "जीवहिसामहत्पापं"।

नीट :- दुर्गा की विल देने दिलाने का पाप लगता है यथा-

बिछदानेन विभेन्द्र दुर्गा प्रीतिर्भवेन्तुणाम्। हिंसा जन्यञ्च पापञ्च लभते नात्र संशयः। उत्सर्ग कर्ता दाता चन्छेत्ता पोष्टा चरक्षकः। अप्र पश्चान्त्रिरोद्धा च सप्तै ते वध भागिनः। योऽयं हन्ति स्र तं हन्ति चेति वेदाक मेव च॥

इति शब्द करुपद्रुम विष्ठशब्दान्तरगत ब्रह्मचैवर्तपुराण प्रकृति खण्ड अध्याय ६२ का वचन ।

अर्थ—हे विप्रेन्द्र ! दुर्गा की प्रीति के अर्थ जो मनुष्य (पशु) विल देते हैं उनकी पशु मारने का पाप (हत्या) लगता है इसमें कोई संशय नहीं। वेचनेवाला, 'लेनेवाला, काटनेवाला, पुष्टकरने वाला, रक्षा करनेवाला, आगे रोकनेवाला, और पीछे रोकनेवाला ये सात मनुष्य उस पशु के मारनेवाले कहाते हैं, यह वेद का कहना है कि जो जिसको मारता है, वह उसकी मारता है, अर्थात जो विधि वा वे विधि के पशु पिक्षयों को मारते हैं वे परलोक में उन्हीं पशु पिक्षयों से मारे जाते हैं, देखो नीचे ७/८ स्होक।

भागवत।

जीवों के दुख देने वाले को यदि राजा वध करै तो अवध ही हैं, अर्थात् कोई पाप नहीं है यथा:—

> पुमान्योषिदुत क्लीव आत्म संभावनोऽयमः । भूतेषु निरनुकोशो नृपाणां तद्वधोऽवयः २६ । इति स्कन्ध ४ अध्याय १७ ।

जो यहां में पहाओं को कारते हैं वही पछा नरकीं में जाकर उसे खाते हैं और यह में मांस सातें वाला भी नरक को जाता है पुनः यह में मरा हुआ पशु भी नरकमें जाता है क्योंकि दुस नरकों में ही दिया जाता है यथा:-

> भो भो पजापते राजन् पश्चन पश्यत्वयाध्वरे । संज्ञापिताञ्जीव सङ्घानिष्टु णेन सहस्रशः ७ । एते त्वां संप्रतीक्षन्ते स्मरन्तो वैशसं तव । संपरेतपयः इटैश्छिन्दन्त्युत्थितपन्यवः ८ । इति स्कन्ध ४ अध्योय २५ ।

यज्ञ में पशु स कारे— जो पाखंड़ी यज्ञ में पशु कारते हैं वे सरकों में अनेक दुख पाते हैं यथा:—

ये त्विह वै दाम्भिकादम्भ यज्ञेषु पश्नून विश्वसन्ति-

तान मुिंद छोके वैशसे नरके पतितान् निरय पतयोघातयित्वा विश्वसंति २५ । ये त्विह वै पुरुषा पुरुष मेधेन याजन्ते याद्य स्त्रियो चपशून् खदनित तांद्यते पशव इह निहता यम सदने पातयन्तो रक्षो गणाः सैनिकाइव स्वधितिना ऽवदायासक् पिवन्ति च्लान्ति च गायन्ति च हृष्यमाणा यथेह पुरुषादाः ३१ ।

इति स्कन्ध ५ अध्याय २६।

जो दुष्ट अपने में अभिान रखते हैं और पशुओं को खाते हैं मरने के बाद उन्हें वही पशु नरकों में खाते हैं यथाः—

> ये त्वनेयं विदोऽ सन्तः स्तव्धाः सदाभि मानिनः। पञ्चन हुइयन्ति विस्तव्धाः मे त्य खादन्ति ते चतान् १४। इति स्कन्ध ११ अध्याय ५।

महाभारत।

जिनकी संसार में कोई मरयादा नहीं है उन मूढ़ नास्तिक धूर्त धन के लोभी बाह्मणों ने यज्ञ में हिसा वर्णन की है और वेद से वाहर पशुओं को मारते हैं वेदों ने कहीं भी हिंसा नहीं कहा किंतु मतु ने सब कर्म हिंसा रहित कहें हैं यथा:—

> छुन्धैर्वित्त परेब्र हम्नास्तिकैः सं प्रवर्तितम् । वेद् वादान विज्ञाय सत्याभास मिवानृतम् ६ । इति शांतिपर्व मोक्षधमं बश्चाय ९०।

जन्यर्गास्थत मयोदिनिमृहैनोस्तिकैनैदैः ।
संत्रबादनोद्दनको दिसा समृतु वर्णिता ४ ।
सर्व कर्ण अदिसा दि दर्यात्मा धनुरवदीतः ।*
कामकारिदेविसंति वद्धियां पश्चरा ५ ।
स्वतं सम्यान्त्रभू मोसमासनं क्रसरीदनम् ।
स्वति प्रवृतितं छ दर्ज तहे देश क्रियतम् ९ । †
सानास्यरेहाच्य को मान्य क्रीस्थितम् मक्रियतम् १० ।
हित शांति एवं मोहर्थम् मध्याय ९२ । ‡

ं क्रोई २ दीर्च दंशिन देसर भी पाठ बताते हैं यथा :— कुराप्रस्थाः पश्चीपीं सं द्विजातीनां चलिस्तथा । ्वीं सन्तितं यहे सैतद्देवेषुकथ्यते ।

्राहित शाल धुराव इतिहरकादि परमात्मा की खास से प्रगट हुए पद्मा---

्व यदाहें खाते रभ्यमंत्रतामध्यामा विनिश्चरन्त्येव वा मरेऽस्य महत्तो भूतस्य नित् क्वीलिसीतः सम्बद्धे यसुर्वेदः सामवेदोऽथवीङ्गि-रस्र इतिहासः युराणं विद्या उपनिषदः स्ठोकाः सत्राज्यतुत्यास्यानि

[ै] इल प्रमाण के मनुस्कृति में जहां ने दिसा प्रतिपादक लोक हैं। बाद गर्मुकुल नहीं कहे आखेंगे।

अहिंसा हो धर्म का लक्षण है इसमें वेद प्रमाण है यथाः— ऋषयो ब्राह्मण देवाः प्रशंसंति महामते । अहिंसा लक्षणं धर्म वेद प्रामाण्य दर्शनात् २। इति अनुशासन पूर्व अध्याय ११।

व्याख्यानान्यस्यैव तानि सर्वाणि निः इवसितानि १०। अध्याय ४ बाह्मण ५ श्रुति ११ में भी ऐसा ही है ।

इति बृहदारण्यकोपनिषत् अध्याय २ बाह्मण ४।

निर्वसितमेव तय हम्वेदो यज्ञ वे दः सामवेदोऽथर्ववेदः शिक्षा करणो व्याकरणं निरक्तं छन्दो ज्योतिषामयनं न्यायो मीमांसा धर्म-शास्त्राणि व्याख्यानान्युपव्याख्यानाति च सर्वाणि च भूतानि हिरण्य ज्योतिर्यसम्बद्यमात्माधि झियंन्ति सुवनानि विद्वा ।

इति सुवालोपनिषत् खंड २।

वेद का कर्ता कोई नहीं है करण के आदि में पूर्व के समान वेद को समरण कर ब्रह्मा प्रकाशित करते हैं और जो मनु करण करण में होते हैं वे भी उसी प्रकार प्रथम की समान धर्मी को समरण कर प्रकृत करते हैं यथा:—

> न कश्चित्रे द कर्ता च वेदं स्मृत्वा चतुर्मुंबः। तथ्वेव धर्मान्स्मरति मनु कल्पान्तरेऽतरे २१।

खर्यभुगनु कहते हैं कि न किसी की मारो न किसी का मांस स्नावो यथाः—

> न भक्षयित यो मांसं न च हन्यात्र घातयेत्। तन्मित्रं सर्वभूतानां मनुः स्वयंभुवोऽत्रवीत् १२। इति अनुशासनपर्व अध्याय ११५।

जो पशुपक्षी अर्धिंद के मांस को खाता है यह अपने पुत्र के मांस का खानेवाला कहा जाता है यथा:—

> पुत्रमांसोपमंजानन् खादते यो विचक्षणः । मांस मोह समायुक्तः पुरुषः सोऽधमः स्मृतः ११ । इति अदुशासनपर्व अध्याय ११४ ।

ऋग्वेद ।

हिंसा रहित यह देवतायों को पहुँचता है यथा :—

अग्ने यं यज्ञमध्वरं विश्वतः परिभूरिस । स इद्देवे ख गच्छति ४।%

इति मंडल १ अष्टक १ अध्याय १ अनुवाक् १ वर्ग १।

इति पाराशर स्मृति अध्याय १।

अ इसका कारण यह है कि—जीवों को दुख देनेसे ईश्वर को

नोट:-वैदिको हिंसा हिंसा न भवति, इसका भी खंडन ही गया ४।

यज्ञ का धर्म अहिं साही है यथा :-

अहिंसा धर्म यागः, ५१ पंक्तिगुटका की

इति पाशुपत ब्रह्मोपनिषत्।

यज्ञाग्नि में खीर का होम दे यथा :--

क्षीर होम्यांग्न।

इतिकात्यायनसूत्र पूर्वखण्ड अध्याय ४ खण्ड १० की अखीर पंक्ति।

यजुर्वे ।

भिन हिंसा नहीं करती यथा :— । श्चिमम्प्रजाब्भ्योहि ६- सन्तम्पृथिब्ब्या .ऽ सधस्त्था दक्तिनम्पुरीष्यम । क्रिरुखत्खनामंऽ. २८।

इतिअध्याय ११।

तुक होता है। क्योंकि सब प्राणियोंमें ईश्वर वास करता है यथा:— ईश्वरः सर्व भूतानां हृदेशेऽजीनतिष्ठति ६१, इति गीता अध्याय १८ । भीर भी पृष्ठ ९ देखो।

सामवेद् ।

मांस खाने वाले राक्षस होते हैं और मांस खाने वालों का अग्नि नाश करती है यथा :—

३९२ ३२३१२३१२३१२ अनुदह सहपूरान कयादो मा ते हेसा सुक्षतरैक्यायाः ८। इति छंद सार्चिक सप्तेय पर्व अध्याय १ खण्ड ८।

अथर्वणवेद् ।

अखीर में मांस खाने वालों का नाश ही जाता है यथा :—
।
।
पिशाचसयगमिस पिशाचचात नमेदाः खाहा ४।

इतिकाण्ड २ अञ्चाक ४ स्क १८।

कूर्मपुराण।

पहिले युगों में ऋषि और राजा पशुहिंसा रहित यज्ञ करते थे यथा :—

> ससर्जक्ष त्रियान् ब्रह्मा ब्राह्मणानां हितायवै । वर्णाश्रम व्यवस्थाश्च त्रे तायां कृतवान्त्रभु ४१ । यज्ञ प्रवर्तनञ्जेव पद्य हिंसा विवर्ज्जितम् ।

द्वापरेऽप्यय विद्यन्ते मित्रभेदात्तथा नृणाम् ४२। इति वृर्वार्द्ध अध्याय २९।

कर्म और श्रेष्ठों का यूजन हिंसा रहित करना चाहिये यथा :— हिंसादि रहितं कर्म चत्तदीश्वर* पूजनम् ८। इति श्री जावाडदर्शनोपनिषद खण्ड २।

मनु पाराशर व्यासादि ऋषियों ने कलियुगमें केवल दान करना कहा है, यज्ञादि नहीं यथा :—

> तपः परं कृतयुगे त्रेतायां ज्ञानमुच्यते। द्वापरे यज्ञमेवाहुदीनमेकं कलौयुगे ८६। §

इति मनुस्मृति ऋध्याय १।

नोट :—पाराशर स्मृति अध्याय १ क्लोक २३। कूर्म पुराण पूर्वार्क अध्याय २९ क्लोक १० और नारदीय पुराण पूर्वसण्ड अध्याय ४१ क्लोक ८९ में भी ऐसाही हैं ८६।

^{*} ईश्वरः सर्व ईशानः, कांड १ वर्ग १ इस्रोक ३० । खामीत्वीश्व-रैः प्रतिरीशिता, अधिभूनीयको नेता प्रसुः परिवृद्धोऽधिपः, कांड ३ वर्ग १ इस्रोक १० । ११ । इस्यमरः ।

[े] कलेर्मध्ये न पदयन्ति हरेनीमानि केवले ३७। इति पत्रपुराण

द्वापर में यह का करना लिखा है तिस में पशुसे रहित।
नैमषारण्य में सदेव शौनकादि ऋषियों ने पशु हीन यह किये हैं,
गृहस्यों को यही धर्म बताया है इससे सबको पशुहीन यह करना
चाहिये यथा:—

पश्च होनाः कृता यज्ञाः पुरोडासादिभिः किल ३४। इति देवीभागवत स्कंघ १ अध्याय २।

किल्युग में बिलकुळ मांस न खाय यथा :-

न कलौ मांस भक्षणम् १७ । इति ब्रह्मचैवर्ते पुराण श्रीकृष्णजनम् खण्ड सध्याय ८५ ।

वृहन्नारदीय पुराण (नारदीय पुराण)।

🕽 यज्ञ में मांस खाना पशु वध कल्यियुगमें वर्ज्यनीय है यथाः—

समुद्र यात्रास्त्रीकारः कमण्डल्ल विधारणम् । द्विजानोमसवर्णील कन्यासप यमस्तथा १३। देवराच्च स्रतोत्पत्तिर्मधूपके पशोर्वधः।

कियायोगसार खण्ड अध्याय २६।

्रेयज्ञानां च त्रतानां च तपसां छुतमेव च । इति ब्रह्मवैवर्त पुराण श्रीकृष्णजनम् सण्ड सध्याय १२८ स्ठीक १४ । मांसादनं तथा श्राद्धे वानप्रस्थाश्रमस्तथा १४ । दत्ता क्षत्तायाः कन्यायाः पुनर्दानं वराय च। नैष्ठिकं ब्रह्मचर्यं अच्च नरमेघाश्वमेघकौ १५। महाप्रस्थान गमनं नोमेघश्च तथा मखः। एतान्धर्मान्कलियुगे वर्ज्यानाहुर्मनीविणः १६।

इति पूर्व खगड अध्याय २४।

श्र वर्ष १ संख्या ३८ पटना, श्राहियन शुक्त ८ शुक्तवार ता० ७ श्रकटूबर १९३२ ई० का छपा दैनिक श्रीकृष्ण पत्र के पृष्ठ ३ की पांचवी पटली में लिखा है कि । 'ब्रह्मचर्य्य की श्रावश्यकता नहीं" इटली में जन-संख्या बढ़ाने के लिये जो श्रान्दो-लन चल रहा है उसका प्रमाणित रूप से समर्थन करने के लिए बतलाया गया है कि योरोपियन मृत्यु-संख्या से श्रमी तक यही निश्चय रूप से माल्म हुआ है कि ब्रह्मचर्य्य स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है। श्रव इस बात का पता ठीक ठीक लग गया है कि श्राविवाहित तथा ब्रह्मचारियोंकी मृत्यु कम श्रवस्था में एवं श्रिविक संख्या में होती है श्रीर विवाहितों की मृत्यु-संख्या कम है। यह श्रनुमान योरोप के तेरह मिन्न भिन्न राज्यों की जन-संख्या की रिपोर्ट ले उस पर विचार करने के बाद निश्चित किया गया है। नोट — ३६ श्रध्याय तक वृहन्नारदीय पुराण है इसके बाद नारदीय पुराण है। इस बात पर खूब ध्यान रहे कि गरुड़ पुराण कोल् टोला स्ट्रीटस्थित ३४।१ नं० वंगवासी ष्ट्रीम मेशिन बन्त्रालय कलकत्ता की छपी है, श्रीर बाकी की सब पुराणों श्रीर उपपुराणों श्री वेंकटेश्वर प्रेस वस्वई की छपी हैं। इस बक्त एक पुराण या श्रनेक प्रनथ दो छापाखानों में छपने से कथा इत्यादि में श्रागे पीछे होजाती है, लेखक और छापा-खाने वाले यह बड़ा श्रनर्थ कर रहे हैं। महाभारत नील केंटी टीका सन् १९१३ ईस्बी में गोपाल नारायण कम्पनी यन्त्रालय बम्बई में छपा है।

कलियुग में यज्ञ × करना मना है यथाः—

सब प्रकार के यज्ञों में जप यज्ञ श्रेष्ठ है यथाः—
 यज्ञानां जप यज्ञोस्मि २५ इति गीता श्रध्याय १०।
 विधि यज्ञाजप यज्ञो विशिष्टो दशिभर्गुणैः ८५।
 इति मनुस्पृति श्रध्याय २।
 पुष्ठ १६ का ५०१लोक भी देखो इससे बाद्यमा को तो विशेष

पृष्ठ १६ का ५० रलोक भी देखो, इससे ब्राह्मण को तो विशेष कर जप यज्ञ ही करना चाहिए, क्योंकि कलियुग में धर्म पीड़ित होने से कर्मयञ्ज उठ गये यथाः—

उसीदन्ते तथा यज्ञाः केवला धर्म पीड़िताः ६४। इति ऋबांड पुराग पूर्व भाग अनुषंग पाद, अध्याय ३१। क्षत्रप्रवालम्भो गवालम्भः सन्यासः प्रतपैतृकम् । देवराच सुतोत्पत्तिः कत्नौ पश्च विवर्णयेत् ॥ नोट— ऊपर का १५।१६ श्लोक देखो ।

इति शब्द कल्पद्रुम गोमेथ शब्द की व्याख्या के अन्तरगत श्रापस्तन्वादि कल्पसूत्र पुराण का बचन ।

कित्युग जोग न जज्ञ न ज्ञानां,
एक अधार राम गुन गाना १०३।
एहि कित्रकात न साधन द्जा,
जोग जज्ञ जप तप वत पृजा १३०।
इति मानस रामायस एकरकारह।

भूठ बोलने वाला यज्ञ कर ही नहीं सकता यथाः — यज्ञो ऽ नृतेन क्षरति तपः क्षरति विस्मयात् ।

इति मनुस्पृति अध्याय ४ श्लोक २३०। श्रौर श्राज कल सब भूठ बोलते हैं।

क्ष निहंतस्य पशोर्यज्ञो स्वर्गं प्राप्तिर्यदीष्यवे । स्विपता यज्ञमानेन किं वा तत्र न हन्यते ३६७ । इति पद्म पुराण सृष्टि खण्ड अन्याय १३ ।

ब्रह्मववर्ता पुराण।

कित्युग में सब प्रकार के कर्म करना मनाहै क्योंकि जब कोई धर्म्म ही नहीं रह गया तो कर्म्म कैसे किया जाय। श्री कृष्ण श्रपने पिता नंद जी से कहते हैं कि अब आप गोकुल वासियों के सिहत शीघ्र गोलोक चले जाइये, क्यों कि किल का आगमन हो गया, यह कर्म की मूल को नाश करने वाला है। अब इसमें यज्ञ व्रत तप लुप्त हो जांयगे यथाः—

गोलोकं गच्छ शीघं त्वं सार्द्धं गोकुलवासिभिः। श्रारात् कलेरागमनं कर्म मूल निकृतनम् ११। यज्ञानां च व्रतानां च तपसां लुप्त मेव च। केदार कन्या शापेन धर्मो नास्त्येव केवलम् १४।

इति श्रीकृष्णजन्मखण्ड श्रन्याय १२८।

नोट—यज्ञ त्रत तपोदानं सांगं नेव कलोयुगे ९ इति पद्मपुराण पाताल खरड अध्याय ८०। विधि हीन यज्ञ का पाप लगता है इति मनु ८।३१७।

अस्पिन् मन्वन्तरे धर्मा कृत त्रेता आदिकेयुगे।

सर्वे अर्घाः कृते जाताः सर्वे नष्टाः कलौयुगे १६। २२ खोक भी देखो।

इति पराशर स्मृति अध्याय १।

निहें कित्तिकर्म न भगित विवेक्, राम नाम अवलम्बन एक् २७। इति मानस रामायण बालकाण्ड ।

किताहि पाइ जिमि धर्म पराहीं १६। इति मानस रामायण किष्किधा कांड।

श्चादि काले खलु यज्ञेषु पशवः समालम्भनीया वभूनुर्नारम्भाय प्रक्रियन्तेस्म ।

इति चरक संहिता चिकित्सित स्थान अध्याय १० प्रकरण (गद्य) ४।

अर्थ-इसप्रकार किंवदंति (जनश्रुति अर्थात् कहावत) चली आती है कि पहिले समय में यज्ञ स्थल में पशुयों को उपस्थित किया जाता था किंन्तु बलिदानादि कार्य नहीं होता था ४।

जो निदंशी हैं पापी हैं हिंसक हैं वे नरक को जाते हैं यथाः—

थ्यशौचा निर्देयाः पापा हिंसकाः ब्रत भंजकाः ।

सोम विक्रयिणश्चैव स्त्रोजितः सर्वे विक्रयी ९। अ तत्रगत्वा यमालये १९।

इति बाराह पुराण अध्याय १९५। हिंसक स्नराव योनियों में जन्म लेते हैं यथाः—

हिंसाका दुष्ट योनिजाः ३१।

यह श्लोकका दुकड़ा १८ पृष्ठ में भी है उसे भी इसी अध्याय के इसी श्लोक का समभा जाय। उसका अध्याय और श्लोक का नम्बर भूलसे गलती लिखगया है।

इति वाराह पुगण श्रध्याय १२०। जो पशुकी हत्या करते हैं वे जितने पशुकी देहमें रोम हैं जतने ही वर्ष नरकों में रहते हैं यथाः—

अश्र प्राणि हिंसा प्रवृत्ताश्च ते वै निरक्गामिनः ६९।

इति महाभारत अनुशासन पर्वा अध्याय २३।

मनुमहाराज हिंसा करना मांस खाना विलकुल मना करतेहैं यथाः—

ना ऋत्वा प्राणिनां हिंसा मांसमुत्त्यचते कचित्।

न च प्राणि वधः स्वर्ग्यस्तस्मान्मांसं विवर्जयेत् ४८।

इति मनुस्पृति अध्याय ५।, २४ ५७ का ५ रलोक भो देखो।

制设计

यावन्ति पशु रोमाणि ताबद्वर्ष सहस्राणि १४। इति भागवत स्कंध ५ अध्याय २६।

यावन्ति पशु रोमाणि ताबत्कृत्वोह मारणम् । दृथा पशुद्रः प्राप्नोति प्रेत्य जन्मनि जन्मनि ३८। इति मनुस्मृति अध्याय ५।

यावन्ति पशु रोमाणि तावतो नरकान्त्रजेत् ४०। ।इति कूर्मपुराण उत्तराह्यं अध्याय १०।

गरुड़ पुराया।

वसेत्नरके घोरे दिनानि पशु रोमभिः ७३। इति पर्व खण्ड अध्याय ९६।

हमारे मारवाड़ी समाज में कटकास्थ धर्म प्रदीप श्रीमान सेठ गिरधारीलालजी और श्रीमान सेठ बदरीदासजी जिस प्रकार धर्मोन्नति की आकांचा कर रहे हैं यदि इसी प्रकार समाज भी धर्म के उठाने को चाहती तो हत्याकाण्ड में अवश्य कुछ न कुछ शिथिलता आजाती। यो भुंको च हथा मांसं मतस्य भोजी च ब्राह्मणः।
इरेरनैवेद्य भोजी क्रिमिकुंडं प्रयाति स ५८।
स्वलोम मान वर्षं च तद्भोजी तत्र तिष्ठति।
ततो भवेन्म्लेच्छ जातिस्त्रिजन्म नियतो द्विज ५९।

इति ब्रह्मवैवर्त्त पुराण प्रकृतिखरङ अध्याय ३०।

यत्र हिंसा परोधर्मः तत्राधर्मश्च की दशः।
यत्र ब्राह्मण मांसाशी तत्र चांडाल की दशः।
यत्र हिंसक धर्मात्मा तत्राधर्मी च की दशः।
दिजो मतस्य मांसाशी च तत्र म्लेच्छ श्च की दशः।

इति ऋहिंसा आदर्श शकल ३ अंक ३३ । ३४ ।

वेदव्यासजी का यह कहना है कि जितने कर्म यज्ञादि हैं सब श्रहिंसा में हैं यथा :—

अहिंसा वैदिकं कर्म ध्यानमिन्द्रिय संयमः। तपोऽय गुरुशुश्रुषा किं श्रेयः पुरुषं प्रति १।

इति महाभारत अनुशासन पर्व अध्याय ११३। १९१६ । । मांसस्या ऽभक्षणे धर्मो विशिष्ट इति नः श्रुति ४३। इति महाभारत अनुशासन। पर्वे अध्याय [११५। विश्व स्थाय है १९५। विश्व स्थाय है १९५। इति महाभारत अनुशासन पर्वे अध्याय है १९४। अहिसा परमो धर्म इति वेदेषु गीयते हैं ६३।

इति पद्मपुराण उत्तरखण्ड अध्याय ६४।

नोट-यजुर्वेद अध्याय २ मंत्र १३ में लिखा है कि हिंसा से रहित यज्ञ को करे । तामसी यज्ञ राज्ञसों का होता है क्योंकि ऐसा देवी भागवत स्कंध ३ अध्याय १२ श्लोक ५ में लिखा है ।

उक्त प्रमाण से अच्छी तरह पक्का हो गया कि वेदों में हिंसा वाला कर्म नहीं है. और वेदव्यास ही।वेदों के तत्त्व को।ठीक जानते हैं क्योंकि उन्होंने ही वेदों के विभाग किये हैं यथाः—

युगे युगेल्पकान्धर्मान्त्रिरीक्ष मधुसूदनः । वेद्व्यास स्वरूपेण वेद भागं करोति वै १७ । वेद्व्यास सुनि साक्षान्तारायण इति द्विजाः १८ । इति नारदीयपुराण पूर्वभाग अध्याय १।

अथर्वण वेद।

श्चारादराति निक्द ति परो ग्राहि कन्यादः पिशाचान्। रश्चो यत् सर्व दुभू तं तत् तम इवाय हन्मसि १२।

ंइति कांड ८ अनुवाक १ सूक्त २।

पदच्छेद्-आरात । अरातिम् । निः-ऋतम् । परः । । ग्राहिम । क्रव्य-अदः । पिशाचान् । रक्षः । यत् । सर्वम् ।

दुः भूतम् । तत् । तमः इव । अप हन्मसि १२ ।

श्रथं- (श्ररातिम्) निर्दान्ता, (निर्द्धतिम्) महामारी [दिरद्रता श्रादि महाविपत्ति] का (श्रारात) दूर, (श्राहिम्) जकड़ने वाली पीड़ा, (कव्यादः) मांस खानेवाले [रोगों] श्रौर (पिशाचान्) मांस भखनेवाले [जीवों] को (परः) परे। श्रौर (यत्) जो कुछ (हुर्भूतम्) कुशील (रच्चः) राज्ञस [दुष्टवाणी है], (तत्) उस (सर्वम्) सवको (तमः इव) श्रंधकार के समान (श्रपहन्मिस) हमें मार हटाते हैं १२।

यः पौरुषेयेण क्रविषा समङ्क्ते यो अश्ब्येन पशुना

इति कांड = अनुवाक २ लूक्त ३।

पदच्छेद-यः। पौरुषेयेण । क्रविषा । सम्-श्रद्धते।

यः । अष्टव्येन । पशुना । यातु—धानः ॥ यः । अध्न्यायाः।
।
।
।
भरिस । श्रीरम् । अपने तेपाम् शीर्षाणि । हरसा । अ पि ।

बृश्चं १५।

श्रर्थ-(यः) जो (यातुधानः) दुखदायी जीव (पौरुषेयेण)
पुरुष वध से [प्राप्त] (क्रविषा) मांस से (यः) जो (श्राश्च्येन) घोड़े
के [मांससे] श्रीर (पशुना) [दूसरे] पशुसे (समङ्क् के) [श्रपनेको]
पुष्ट करता है। श्रीर (यः) जो (श्राध्न्ययाः) [नहीं मारने योग्य]
मौके (चीरम्) दूधको (भरति=हरति) नष्ट करता है (श्राग्ने) हे
श्राग्न [समान तेजस्वी राजन्] (तेपाम्) उनके (शीर्षाणि) शिरों
को (हरसा) श्रपने बलसे (श्रापन्नश्च)काटडाल १५।

भावार्थ-जो कोई पुरुष, मनुष्य वा घोड़े वा अन्य पशु का मांस खाबे वा गो को सार कर दूधको घटाबे, राजा उसका शिर कटवादे १२। यही मंत्र ऋग्वेद् संडल १० अष्टक ८ अध्याय ४ अनुवाक अवर्ग ८ में लिखा है १५।

भ व शर्भावस्थतां पापकृते कृत्याकृते । दुष्कृते विद्युतं देवहेतिम् २३ ।

इति कांड १० घनुवाक १ सृक्त १।

पदच्छेद-भवाशवीं । श्रस्यताम् । पाप कृते । कृत्या-। । । कृते । दुः-कृते । वि-स्तम् । दे व हेतिम् २३ ।

अर्थ—(भवारावों) सुख देनेवाले श्रीर दुख नाश करनेवाले [राजा श्रीर मंत्री दोनों] (पापकृते) पाप करनेवाले (कृत्यकृते) हिंसा करनेवाले श्रीर (दुष्कृते) दुष्कर्मी पुरुष के लिये (देवहेतिम्) विद्वानों के वंश्र (विद्युतम्) विज्जली [शस्त्र] को (श्रस्यताम्) गिरावे २३।

कृत्याकृतो वलगिनो ऽ भिनिष्कारिणः प्रजाम् । मृखी । । । । हि कृत्ये मोच्छिषो ऽ मृन् कृत्याकृतो जहि ३१ । पदच्छेद - क्रुत्या - क्रुतः । बलगिनः । अभि - निष्कारिणः

म-जाम् ॥ मृणी-हि । कुत्ये । मा । उत् । शिषः । श्रमून् । , कुत्या-कृतः । जहि ३१ ।

श्रां — (कृत्ये) हे कर्तव्य छुशल [सेना ?] (कृत्याकृतः) हिंसा करने वाले (वलिगनः) गुप्त कर्म करने वाले श्रौर (श्रमिनिष्कारिणः) विरुद्ध यत्न करने वाले की (प्रजाम्) प्रजा [सेवक श्रादि] को (ग्रणीहि) मारडाल , (मा उन् शिष) मत छोड़, (श्रमुन्) उन (कृत्या कृतः) हिंसा करने वालों को (जिह्ने) नाश कर ३१। नोट — श्रथवण वेद काण्ड १२ श्रमुवाक १ स्क १ मन्त्र ५० श्रौर श्रमुवाक३ स्क ३ मन्त्र ४३ में हिंसा निवेध है। ये गन्धर्वा । श्रमुवाक३ स्क ३ मन्त्र ४३ में हिंसा निवेध है। ये गन्धर्वा । श्रमुवाक३ स्क ३ मन्त्र ४३ में हिंसा निवेध है। ये गन्धर्वा । श्रमुवाक३ स्क ३ चारायाः किमीदिनः इत्यादि ५०। श्रम्वी । स्वस्तपत्रु यद् विदेवं क्रव्यात पिशाच इत्यादि ४३।

जो मनुष्य पशुत्रों को बेचते हैं वह कभी भी सिद्धि को प्राप्त नहीं होते न सुख पाते हैं श्रीर उस जीव को वा मनुष्य को मृतक सममना चाहिये क्योंकि सब जीवों में सब देवता निवास करने हैं यथाः— पंचेन्द्रियेषु सूरेषु सर्व वसित दैवतम् ।
श्रादित्यश्चन्द्रमा वायुर्वसा प्राणः क्रतुर्ययः ४०।
तानि जीवानि विकीय कामृतेषु विचारणा ।
श्रजो ऽ प्रिर्वरुषो मेषः सूर्यो ऽ श्वः पृथिबी विराट्४१।
थेनुर्वत्सश्च सोमो वै विकीयै तन्नसिध्यति ४२ ।

इति महाभारत शांति पर्व मोक्षधर्म अध्याय ८९। नोट – ऋतु = विष्णु। जब कि पशुस्रों के वेचने का इतना बड़ा दोष बताया है तो पशु खाने वाले को क्या कहेंगे।

शिव पुराण।

शिव भक्त को अहिंसक होना चाहिये यथाः—
न्यायार्जित सु वित्तेन वसेत्प्राज्ञः शिवस्थले ।
जीव हिंसादि रहितमतिक्षेश विवर्जितम् ११५ ।
इति विद्येश्वर सहिता अध्याय ६८।

कदान भरम को घारण करने वाले शिवोपासकां को मध मांस लहसुन प्याज वर्जित है यथाः— मद्यं मोसं तु लशुनं पलाएडुं शिश्रुमेव च । ः श्लेब्मांतकं विडवराइं भक्षणे वर्जयेचतः ४३।

इति विद्येश्वर संहिता श्रध्याय २५। शंकर भक्तों को सब का हित करना चाहिये यथाः— सर्व भूत हिते रतः ८६।

इति रुद्र संहिता खग्ड १ व्यथ्याय १२। सब को व्यहिंसक होना चोहिये यथाः—

तथे वे मरणाद्गीतिरस्पदादि वपुष्मेताम् ।

ब्रह्मादि कीटकांतानां तथा मरणतो भयम् १४ ।

सर्वे तनु भृतस्तुल्या यदि युद्ध्या विचार्य्यते ।

इदं निश्चित्यंकेनापि नो हिंस्यः कोऽपि कुत्रचित्१५।

धर्मो जीव दया तुल्यो न कापि जगती तत्ते ।

तस्मात्सर्व पयत्नेन कार्या जीव दया नृभिः १६ ।

एकस्मिन् रक्षिते जीवे त्रैलोक्यं रक्षितं भवेत् ।

धातिते घातितं तद्वत्तस्माद्रक्षेत्र धातयेत् १७ ।

अहिंसा परमो धर्मः पापमात्म मपीडनम् ।

श्चपराधीनता सुक्तिस्स्वर्गो ऽभिलपिताशनस् १८। पूर्व सुरिभिरित्युक्तं सत्प्रमाण तया ध वम् । तस्मान्न हिंसा कर्तच्या नरैर्नरक भीरुभिः १९। न हिंसा सदशं पापं त्रैलोक्ये सचराचरे। हिंसको नरकं गच्छेत् स्वर्ग गच्छेदहिंसकः २०। संति दातान्यनेकानि किं तैस्तुच्छ फल पदैः। श्रभीति सदशं दानं परमेकमपीह न २१। इह चत्त्रारि दानानि मोक्तानि परपर्षिभि:। विचार्य नाना शास्त्राणि शर्मणे ऽत्र परत्र च २२। भीतेभ्यश्चाभयं द्यं व्याधि तेभ्यस्तथौष्यम । देया बिद्यार्थिना बिद्या देयमनं क्षुपातुरे २३। यानि यानीह दानानी बहुमन्युदितानि च। जीवाभय पदानस्य कलां नाईति षोडशीम् २४। प्रमाशिकी अतिरियं पोच्यते वेद वादिभि:। न हिंस्यात्सर्व भूतानि नान्या हिंसा प्रवर्तिका ३१। अप्रीष्टोमीयमितिया अामिका सा ऽसतामिह। न स ममाखं बाद्रणां पश्वालंभन कारिका ३२।

मुक्षांश्छित्वा पशून्हत्वा कृत्वा रुधिर कई पम् । दग्ध्वा वहाँ तिलांच्यादि चित्रं स्वर्गो ऽ भिलष्यते ३३। ॥

इति स्ट्रसंहिता खंड ५ ऋध्याय ५।

नोट — श्रसिपत्रवनं याति वृत्तच्छेदी वृथैव यः १८।

इति शिवपुराण उमा संहिता ऋष्याय १६।

अ यदि जीव अमर होता तो जीवोंके रारीर काटनेको अहिंसा कहते यथाः—

श्रविनाशोस्य सत्वस्य नियतो यदि भारत । भित्वा शरीरं भूतानामहिंसाप्रतिपद्यते ५ ।

इति महाभारत आश्वमेधिक पर्वे अध्याय १३।

नाशानाशवान् ४ प्रकार का होता है, जर १ खजर २ निरक्तर ३ निरक्तरातीत ४, इनके निर्णय में पंच सर्गीय महारामायण सर्ग ३ [५०] क्षोक २ से ११ तक देखो। यह श्राश्वमेधिक पर्व श्रध्याय १३ का पांचवा ऋोक जर शब्द (जीव) का बोध कराता है। इसीवास्ते किसी के भी शरीर को दुख देने से पाप लगता है, प्रत्यच्च में भी तुम अपने शरीर के दुख-सुख से दूसरे के शरीरों का दुख सुख जान सकते हो।

जो शिवभक्त मांसादि स्थमन को भन्गा करता है वह महा पापी है यथाः—

त्रामिषं शिव भक्तानामभक्ष्यस्य च भक्षणम् ३३ । इति उमासंहिता अध्याय ५ ।

नोट-यह ध्यान रखना चाहिए कि यह ऋोक महापापों के प्रकरण

में का है।

अख-शस्त्रों का बनाना बेचना लेना निषेध है यथाः—

धनुषः शस्त्र शस्यानां कर्तायः क्रय विक्रयी । अ निर्द्यो ऽ तीव मृत्येषु पश्चनां दमनश्चयः २६ ।

इति उमा संहिता अध्याय ६।

क्ष्यो सब प्रकार के अख-राखों को बनाता है और घनुष-बार्फ बनाता है वह नरक में गिरता है यथाः-

शस्त्राणां चैव कर्तारः शल्यानां धनुषां तथा। विक्रेतारच राजेन्द्र नरा निरच गामिनः १७।

इति पद्मपुराण भूमिखंड श्रध्याय ९६।

जो बैलको विधया करते, नाथते और गौ को जोतते हैं वे महा पापी हैं महा नरक को जाते हैं। और जो बैल भार के ढोने से घायल दुखी भूखा है और जो उन भूखोंको यत्नसे नहीं पालते वे मोहत्यारे और महापापी हैं यथाः—

ये भारक्षत रोग्यर्तान्गो दृषांश्च क्षुघातुरान् ।
न पालयंति यत्नेन गोघ्नास्ते नारकास्स्मृताः ३३ ।
बृषाणां बृषणान्ये च पापिष्ठा गालयंति च ।
वाह्यंति च गां बंध्यां महानारकीनो नराः ३४ ।

नोट-उक्त श्लोक महापापों के प्रकरण में के हैं।

इति उमासंहिता अध्याय ६।

धनुषबाण बनानेवाला नरकको जाता है यथाः— शल्यानां धनुषांचैव ते वै निरय गामिनः ७६। इति महाभारत श्रानुशासन पर्वे श्राध्याय २३ ।

मनुस्मृति श्रम्याय ३ श्लोक १६० में भी ऐसा ही है । हिंसा करने वाले यंत्रों का बनाना उपपातक है यथा "हिंसयंत्र विधान च २४०" इति याज्ञवल्क्य स्मृति श्रम्याय ३। न तिलमात्र मांस खाय और न किसी को देवे नथाः— यतस्तं मांसमुद्धृत्य तिलमात्र प्रमाणतः । खादितुं दीयते तेषां भित्वा चैव तु शोणितम् ५०।

इति उमासंहिता ऋध्याय १०।

सनुष्य का बड़ा धर्म आचार ही है । आचार से भृष्ट की लोक में निंदा होती है बथा ।:—

श्राचारः परमोपर्मः श्राचारः प्रमं धनम् । श्राचारः परमा विद्या श्राचारः परमा गतिः ५५ । श्राचार हीनः पुरुषो लोके भवति निन्दितः । परत्र च सुखी न स्यात्तस्यादाचारवान्भवेत् ५६ ।

इति वायवीय संहिता उत्तरखंड ऋध्याय १५)

नोट-उत्तम खान-पान को ही आचार कहते हैं। मनुष्मृति अध्याय १ श्लोक १०७-१०८ में लिखा है कि चारों वर्णों को आ-चार करना चाहिये और आचार ही परम धर्म है यह वेद-शास्त्र कहते हैं। अध्याय २ श्लोक ६ में क्लिखा है कि आचार साधुवों की आत्मा को शुद्ध करता है।

पद्मपुरावा।

यदि क्ष्यत्र में पशु इत्या करनेवाला ही स्वर्ग को जायगा तो नरक में कौन जायगा यथाः—

यइं क्रत्या पशुं इत्वा क्रत्या रुधिर कर्दमम्। यद्येवं गम्यते स्वर्गो नरकः केन गम्यते ३२३। इति सृष्टि खण्ड अध्याय १३।

ष्राह्मण मांस खानेसे पतित होते हैं यथा:—

श्चाकाश गामिनो विषाः पतिता मांस अक्षणात् । × तेषां न विद्यते स्वर्गो मोक्षो नैवेह दानवाः ३२५ । इति सृष्टि खण्ड श्रन्थाय १३ ।

हम नहीं जानते कि परिड उत्तोग क्यों मांस खाते हैं यथा:-

श्रवमेव मलः पुग्यः क्लोनैव प्रवर्तते ७५ इतिपद्मपुराग्यः
 पाताल खण्ड अध्याय ८५।

[×] अज्ञानाद् भत्त्यन् मांसं सप्रेतो जायतेनरः ६० इति गहड़ पुराण् उत्तर खण्ड श्रध्याय २२।

जातस्य जीवितं जंतोरिष्टं सर्वस्य जायते। त्रात्म मांसोप मंगांसं कथं खादेत् पंडितः ३२६।

इति सृष्टि खरड अध्याय १३।

पशुघात दुष्ट धर्म है यथाः—

तदत्तं पशु घातादि दुष्ट धर्मेनिवोधत ३६१।

इति सृष्टिखरुड श्रध्याय १३।

यदि यज्ञ कर्म दूसरे को दुखदाता है तो तथा है यथाः -

यज्ञ कर्म कलायस्य तथाचान्ये द्विजन्मनाम् । नैतव्यक्ति सहं वाक्यं हिंसा धर्माय जायते ३६५।

इति सृष्टिखण्ड अध्याय १३।

ऽ यदि यज्ञ कर्म दूसरे को सुखदाई है तो यजमान अपने मिताको मारडाले यथाः—

इंवर्षबोध ये चान्ये नैिंद्कं पत्तमाश्रिताः । हिंसा प्रायाः
 सदा क्रूरा मांसादाः पाप कारिणः ३२० इति पद्मपुराण
सृष्टि खंड अध्याय १३।

निहंतस्यं पशोर्यक्ने स्वर्गे पाप्तिर्यदीष्यते । स्विपता यजमानेन किं वा तत्र न हन्यते ३६७ ।

इति सृष्टिखण्ड श्रध्याय १३।

नोट—श्रातम मांस्रोप मंगांसं कर्य खादेति जंतवः ३९६।

इति सृष्टि खगड श्रध्याय १३।

शाशि के बध होने में शपथ खाना मूठ बोलना पाप नहीं है बधाः—

पाण त्यागे सम्रत्यक्षे शपयैर्नास्ति पातकम् ३९१ । चलवानृतं भवेद्यत्र पाणिनां पाण रक्षणम् । प्रानृतं तत्र सत्यं स्यात् सत्यमप्यनृतं भवेत् ३९२ । परेषां पाणरक्षार्थं वदाम्येवानृतं वचः ३९४ ।

इति सृष्टिखण्ड अध्याय १८।

संसार में जितने मनुष्य धर्म हैं सब श्राह्सा के भीतर हैं। यथाः—

प्रविशंति यथा नद्यः समुद्र मृजु वक्रगाः ।
सर्व धर्मा द्यहिसायां प्रविशंति यथा दृदम् ३७ ।
इति स्वर्गखण्ड ऋष्याय ३१ ।

यथा हस्ति पदेष्वन्यत्पदं सर्वं प्रतीयते । सर्वे धर्मस्तथा व्याघ्र प्रतीयन्ते हाहिंसया ४४१ ।

इति सृष्टिखरड श्रध्याय १८।

हिंसक अन्धे होते हैं यथाः—

मातृवत् पर दारांश्व पर द्रव्याणि लोष्टवत् । श्रात्मवत्सर्वे भूतानि यः पश्यति स पश्यति ३३७।

इति सृष्टिखंड श्रध्याय १९।

दयावान पुरुष मरने पर प्रेत नहीं होते यथाः— सर्वभूत दयापन्नो न प्रेतो जायते नरः ४० ।

इति सृष्टिखंड ऋष्याय ३२।

यज्ञ में देवतों को खीर पाक खवाना चाहिये यथ।:-

यज्ञेषु च हिनः पाकं १६३। देवा भुजति इच्यानि वित्तं मेतादयो सुराः ११६।

इति सृष्टि खंडे ऋष्याय ४०। ४६।

नोट-यज्ञार्थका द्वेलका नाचत्रा माम याजकाः।

परदाररता नित्यं पंचैते ब्राह्मणाधमाः ११२।

इति सृष्टिखंड श्रव्याय ४७।

संसार में विना आचार के मनुष्य का कल्याण नहीं हो सकता यथाः—

श्रनाचारी हतो विमः स्वर्गलोकेषुगहितः १२। श्राचाराञ्जभते त्रायु श्राचारा लभते सुखम् ७५। श्राचारात्स्वर्ग मोक्षं च श्राचारो हंत्यलक्षणम्। श्रनाचारो हि पुरुषो लोको भवति निंदितः ७६। अ इति सृष्टिखंड श्रम्याय ४९।

श्रिहिंसा परमा सिद्धिः ६१।

इति सृष्टि खंड अध्याय ५३।

मांस खानेवाले पाप खाते हैं यथा :—

श्रिश्चाचारेण विना मत्यों झान हीनो यतिर्तथा। मंत्र हीनो यथा राजा तथा यं नैव शोभते ४४। इति पदा पुराण भूमिखंड अध्याय ४२। भक्ष्याभक्ष्य समप्तनंति मत्स्य मांसादिकं नराः। वने द्विजातयाश्चान्ये भुंजते च पापकम् ५१।

इति सृष्टिखंड अध्याव ७६।

इमको दयाधर्म से ही मोज्ञ दिखाती है यथाः— दयाचैव परो धर्मस्तत्र मोक्षः मदृश्यते १७।

इति भूमिखंड ष्रध्याय ३७।

जो जीवों पर द्या करता है श्रीर उनकी रक्षा करता है वह चंडाल श्रीर शुद्र भी ब्राह्मण है श्रीर जो ब्राह्मण निर्देशी है पशु घातक है वह पापी श्रीर कूर है यथा:-

दयादान परो नित्यं जीवमेव परक्षयेत् । चाग्डालो ऽ प्यथ शुद्रो वा स वै ब्राह्मण उच्यते ४३ ब्राह्मण: निर्देयो यो वै पशुघात परायणः। स वै सु निर्देयः पापी कठिनः क्रूर चेतनः ४४। अ इति भू मिखंड अध्याय ३७।

क्ष त्राततायी वाह्यण के मारने में पाप नहीं लगता चौर न कोई दोष है देखो वशिष्ठ स्मृति अध्याय ३ श्लोक २० त्र्यौर मनु- अहिंसा ही सब घर्में। से बड़ाधर्म है यथाः-

श्रिंदिसा परमो धर्मो हाहिसैव परं तपः ।
श्रिंदिसा परमं दानिमत्याहुर्मुनयो सदा २७ ।
मशकान्सरी सृपान् दंशान्यूकाद्यान्मानवास्तथा ।
श्रात्मौपम्येन पश्यंति मानवा ये दयालवः २८ ।
भूतानि येत्र हिंसंति जलस्थलचराणि च ।
जीवनार्थं च ते यांति कालस्त्रं च दुर्गतिस् ३० ।
इति स्वर्गखण्ड श्रध्याय ३१ ।

नोट—ऋहिंसा परमोधर्मं इति वेदेषु गौयते ६३ । उत्तर खंड

हिंसक यहां वहां दोनों लोकों में सुख नहीं पाते यथाः—

लोकद्वये न विदंति सुखानि पाणि हिंसकाः ३६ । इति स्वर्गखंड अध्याय ३१।

स्मृति अध्याय ८ ऋोक ३९०-१४४। आततायी का स्वरूप देखों मनुस्मृति अध्याय ८ ऋोक १८७-१८८ और वशिष्ठ स्मृति अध्याय ३ ऋोक १९। संयोगं पतितैर्गत्वा (इति मनु १२। ६०) अर्थान् पनित का संसर्गी ब्रह्मरान्स होता है। नोट – हिंसा भवन्ति कव्याशः (इति मनु० १२। ५९) ऋर्थान् प्राणियों का बध करनेवाले, कच्चे मांस भन्नण करनेवाले जंतु होकर जन्मते हैं ५९।

मेत धूमं विवर्जयेत् ६७।

इति स्वर्गखंड अध्याय ५५

जितने पशु की देह में रोम हैं उतने वर्ष हिंसक को नरकर्ने रहना पड़ता है इससे प्राणि हिंसा को छोड़े यथा:--

यावन्ति पशु रोगाणि तावन्नरकमृच्छति ४२। अ० ५६। प्राणि हिंसा निष्टत्तश्र १९। अ० ५९।

इति स्वर्गसण्ड।

प्राणियों की इत्या करना महापाप है यथा:--

माणिहत्या महापापं ७७।

इति पातालखरड अध्याय २०

मांस खानेवाले की दुद्शा यथा:-

राक्षसी योनिमाप्तोति सक्रन्मांसस्य भक्षणात् । षष्ठि वर्ष सहस्राणि विष्ठायां परिपच्यते २१।

तन्मुक्तो जायते पापो विष्ठाशी ग्राम सूकर: २२। नोट-यह कार्तिक महीने का ही नियम है। इति उत्तर खंड श्रध्याय ११८।

मार्कण्डेय पुराण।

प्राणियों को भयभीत करनेवाले मृत्युकाल में प्राणान्नी बेदना भोगते हैं यथाः—

पाणब्री वेदनां कष्टां ये चानुद्वेगकारिणः ५७। इति अध्याय १०।

जो बैल को बिधया करता है वह नपुंसक होता है फिर २१ जन्म कृमि कीट पतंग जलचर पत्ती मृग तथा गो योनियों में उत्पन्न हाता है, इसके पोछे चांडाल डोमादि नीच योनियों में जन्म लेता है, फिर लॅंगड़ा श्रंथा बहिरा कोढ़ी तथा यहमा रोग से पीड़ित होता है यथा:—

वृषस्य दृषग्गो छित्वा षंडत्वं प्राप्तुयान्नरः ३३।
पिन्हत्य तथा भूगो जन्मनामेकविंशतिः।
कृमिः कीटः पतंगो वा पक्षी तोयचरो मृगः ३४।
गोत्वं च पाप्त चांडाल पुरुकसादि जुनुष्मितम्।
पंग्वंथो बिधरः कुष्टी यक्ष्मणा च प्रयोडितः३५।
इति अध्याय १५।

गृहस्थ को सदा श्राचार पालन करना चाहिये यथा:-

गृहस्थेन सदाकार्यमाचार परिपालनम् । न हाचार विहोनस्य सुखं यत्र परत्र च ६।

इति अध्याय ३१।

व्रह्माण्डपुरागा ।

यज्ञ हिंसाका निषेध यथाः-

महषेयस्त तान्दञ्चा दीनान्यश्च गर्णास्तदा । पमच्छुरिंद्रिं संभूय को ऽ यं यज्ञ विधिस्तव १६। श्रधमी वलवानेष हिंसा धर्मेप्सया ततः। ततः पशु वधश्रैषतव यज्ञे सुरोत्तम १७। अधर्मो धर्म घाताय प्रारब्धः पश्च हिंसया । नायं धर्षो हावर्षों ऽ यं न हिंसा धर्म उच्यते १८। यज्ञ वीजै: सुर श्रेष्ट येषु हिंसा न विद्यते २०। तस्यादहिंसा धर्मस्य द्वारमुक्तं महर्षिभिः ३५ ।

इति पूर्वभाग अनुपंगवाद अध्याय ३०।

चारो वर्णीको चार प्रकार के यज्ञ यथा:-

अ।रंभयज्ञाः अत्राश्च हिर्विज्ञा विश्वस्तथा । परिचार यज्ञाः ऋद्रस्तु जप यज्ञाः द्विजोत्तमाः ५५। इति पूर्वभाग अनुषंगपाद अध्याय २९।

नोट-यज्ञानां जप यज्ञोस्मि गीता १०। २५। विधि यज्ञाज्जप यज्ञो विशिष्टो दशभिगुँगौः मनु २। ८५। पृष्ठ १६ में ५० रत्नोक भी देखो ।

भविष्य पुराण।

अनेक प्रायश्चित यथा:-

त्रोष्ट्रमाविक दुग्धं च श्रन्नं मृतक सूतके। चौरस्यान्नं मृतश्राद्धे भुत्तवा चांद्रायणं चरेत् ४७। मृतान्नं मधु मांसं च यत्सु भुंजीत ब्राह्मणः। स त्रीणयहान्युपवसेदेकाहं चोदके वसेत् ५९।

इति बाह्मपर्व अञ्चाय १८४।

राजा प्राचीनवर्हि ने नारद के उपदेश से हिंसा वाला यज्ञ स्रोड़ दिया यथा—

राजा पाचीनवर्हिश्र वसूव मख कारकः १।

नारदस्योपदेशेन त्यक्तवा हिंसा मयं मखम्। ज्ञानवान वेष्णवो भूत्वा दश पुत्रानत्रीजनत् २ ।

इति प्रतिसर्ग पर्व श्रव्याय १६।

नोट—किसी प्रकार की भी हिंसा करनेवाला बैंच्एव नहीं हो सकता। इसी १६ और १७ अध्याय में नामदेव, रामानन्द, शिकंदर, रंकण बैश्य १६।, कबीर. नरसीबैश्य, पीपा. नानक, नित्यानंद १७।, इत्यादि नाम हैं और कौन किसका शिष्य है।

निस्ताराय तु लोकानां स्वयं नारायणः प्रभुः। व्यास रूपेण कृतवान् पुरागानि महीतले। इति शब्दकलपट्टुम पुराण शब्दान्तरगत। सका ३९ का १७ रलोक भी देखो। व्यासो वेद विदांवरः २०।

इति महाभारत त्राश्रमवासिक पर्व अध्याय ३०।

महाभारत।

यदि तुम छाग (बकरे) के कल्यासार्थ यज्ञ करते हो, और छाग के प्रास वियोग कराने से तुकको उसका कल्यास दिखाता है, तो तुम्हारा क्या प्रयोजन निकला, केवल छाग ही का कल्यास हुआ यथा:- पार्गोर्वियोगेच्छागस्य यदि श्रेयः प्रपश्यति । छागर्थे वर्त्तते यज्ञो भवतः किं प्रयोजनम् ११ । इति महाभारत आग्वमेधिक पर्वश्रक्षाय २८ ।

"नोट—(क)पशुका कल्याग हुवा या नहीं, (गीतार 1२०)परनतु तुमने उसके शरीर को ईंधन सरीखा श्राग्न में जला दिया केवल श्राप्त के वास्ते (देखो पृष्ठ ३३ की टिप्पणी का ३६७ श्लोक), श्रोर किसी तरह खाया, मुदें को ही श्राग्न में जला के खाया। मनुष्य, जलचर, थलचर, श्राकाशचरादि जो मर जाते हैं वे मुदें ही होते हैं। इससे यह तुम्हारा कहना पाखंड है कि यज्ञ का मरा पशु स्वर्ग को जाता है श्रोर इसे वैदिक यज्ञ नहीं कहते किन्तु पाख्य यज्ञ कहते हैं। इसी श्रध्याय का १५ श्लोक देखो।

यदि ऐसा ही है तो नरमेघ, गोमेघ, अश्वमेघ इन यहां को भी इस वक्त करो और तत्तत जानवरों को खावो, दीन बकरी के बच्चे ने ही तुम्हारा क्या बिगाड़ा है जो उसे कुत्ते गीदड़ सरीखा मारके चबा जाते हो। मांशासी पशु के मांस के बदले यदि मनुष्य मांस खायें कि जो मनुष्य मृत्यु से मर जाता है तो क्या हानि है, क्योंकि मांस तो सब का ही अशुद्ध होता है। यह करने वाले यदि बेद के मतलब की जानते (गीता १४। १ से ५) तो हिंसा ही क्यों करते। तपोधन ऋषियों ने यज्ञ की पशु हिंसा का निषेध किया हैं, इस वास्ते जो बेद की हिंसा को अहिंसा कहते हैं वे कितव हैं। यदि बेद की हिंसा अहिंसा कही जाती (जैसा कि "वैदिकी हिंसा हिंसा न भवति") तो सुज्ञ ऋषि क्यों यज्ञ (बेद) की हिंसा का प्रतिषेध करते यथाः—

ततो दीनान्पशून्दष्ट्वा ऋषयस्ते तपोधनाः।
ऊचुः शकं समागन्य नायं यज्ञविधिः शुभः १२।
अपरिज्ञानमेतत्ते महान्तं धर्मीमच्छतः।
न हि यज्ञे पशुगासा विधि दृष्टाः पुरन्दर १३।
धर्मोप्रधातकस्त्वेष समारम्भस्तव प्रभो।
नायं धर्म कृतो यज्ञो,न हिंसा धर्म उच्यते १४।

इति महाभारत आश्वमेधिक पर्व अध्याय ९१।

(स) श्रहिंसा सर्व घर्माण्मिति वृद्धानुशासनम्। यदहिंस्रं भवेत्कर्मे तत्कार्यमिति विद्महे १६। श्रहिंसा सर्व भूतानां नित्यमस्मासुरोचते १८।

इति महाभारत आरवमेधिक पर्व अध्याय २८।

श्रहिंसा सर्व भूतानामेतत्कृत्यत्मंमतम् २।

इति महाभारत आरवमेधिक पर्वे अध्याय ५०।

चिता यज्ञं करिष्यामि विधिरेष सनातनः १८। इति महाभारत आश्वमेधिक पर्वे अध्याय ९२।

(चिंतायझं ⇒मानसीयझं) । ज्ञान यझ (गीता ९ । १५) । श्रहिंसा सर्वो घर्मानां [परंमहत्] ८१ ।

इति पंचसर्गीय महारामायण सर्ग.५ [५२]।

(ग) ऋषि और मनुष्य अलग २ हैं, देखो ब्रह्मपुराण गत गौतमी माहात्म्य अध्याय १ श्लोक ४-६, भागवत स्कंघ ७ अध्याय १४ श्लोक १५ और मानस रामायण किर्ष्किया कांड १३। मनुष्यों को ही पाप लगता है, ऋषि मुनियों को नहीं क्योंकि जितने धर्मशास्त्र हैं वो सब मानव धर्मशास्त्र हैं। जो लोग ऋषि, देवता और भग वत अवतारों का प्रमाण पाप सिद्ध करने को दे बैठते हैं, यह उन कीं गल्ती है। पुनः सामर्थवान पुरुषों को दोष नहीं लगता, 'समस्थ कहँ नहिं दोष गोसाईं। रिव पावक मुरसिर की नाईं।, इति मानस रामायणवालकाएड ६९। वायु की समान सामर्थवान पुरुष दोषमें लिप्त कभी नहीं होते इतिमार्कएडेयप्रुराण अध्याय १६ श्लोक ११६।, याझवलक्यस्मृति अध्याय ३ श्लोक ३११ में लिखा कि धर्मात्माओं को महापाप भी नहीं लगसकते।

(क) बकरे भेड़े और मछली का मारना संकरी करण पाप है

श्रर्थात् इनके वध करनेमें मनुष्य शंकर होजाते हैं इतिमनु ११।६९। संकरी करण पाप करने वाले १ मास चांद्रायण वत करने से शुद्ध होते हैं, इतिमनु ११। १२६। बकरा वा भेड़ा वध करनेवाला एक बैलको दान करनेसे ग्रुद्ध होता है, इतिमनु ११।१३७, वृहत्पाराश-रीय धर्मशास्त्र ६।१६१, याज्ञबल्क्यस्मृति ३।२७१। कछुए का मारने वाला एक वर्ष तक ब्रह्महत्या का व्रत करने से शुद्ध होता है इति शंखस्मृति १७ । २२ । पाराशरम्मृति ६ । १० में लिखा है कि कछुए के बध करने वाले दिन रात निराहार रहने से शुद्ध होते हैं । गांव में रहने वाले पशु का बध करने वाला एक मास तक ब्रह्म हत्या का वत करें तब शुद्ध होता है, इतिशंखस्मृति १७ । १० । पत्ती सर्प जल में रहने वाले मछली आदि जीव अथवा विल में रहने वाले चृहे आदि जीव का वध करने वाला ७ रोज ब्रह्महत्या का बत करें तब शुद्ध होता है, इति शंखस्मृति १७।११। महकी को मारने वाला ३ रात्रि उपवास करने से शुद्धहोता है, इति बृह्दिष्णु स्मृति अध्याय ५० श्रंक ३२।

एक खुर वाले (घोड़े आदि) तथा दोनों ओर के दातों से अ खाने वाले (खस्सी आदि) पशु का मांस खानेवाला भी ३ रात निराहार रहें तब शुद्ध होता है.इतिष्ट्रहिष्णु स्मृति ५१। ३०। जल अब में विचरनेवाले, जलमें उत्पन्न होने वाले चोंच तथा नख से खोदने वाले, जाल के समान पैर वाले, पन्नी का मांस खाने वाले ७ दिन तक बहाहत्याका बत करें तब शुद्ध होतेहैं, इतिशङ्ख स्मृति १०१६। वकरे का मांस खाने वाला १४ दिन तक बहाहत्या का बत करें तब शुद्ध होगा, इतिशङ्ख स्मृति १०। २९। मछली की हड्डी छूजाने से मनुष्य पापो हो जाता है, इतिश्रित्रस्मृति १८०-३०२। मछली खाने वाला ३ दिन उपवाल करें, इतिग्रह दुपराण पूर्वा खंड ९६। ७१। मछली का मांस खानेवाला १२ दिन तक निराहारवत करें, इति दशनस्मृति अध्याय ९ स्रोक २५ से २८ तक। सब मनुष्यों को बिलकुल मछली खाना मनाहै इतिमृत् ५।१५, याज्ञवल्क्य १।१०५, पद्म पुराण स्वराखंड ४६। ३०।

(ङ) याज्ञवल्क्य स्मृति अध्याय ३ श्लोक २२६ में लिखा है कि को पाप अज्ञान से होता है वह प्रायश्चित से दूर होता है, ज्ञौर जो जान बूक्त कर पाप किया जाता है वह प्रायश्चित से दूर नहीं होता, श्लोक २९४ से ३०६ तक में लिखा है कि जिस्स पाप का प्रायश्चित नहीं कहा गया है उसे देशकाल के अनुसार करना, और श्लोक ३२० में लिखा है कि जो पाप शास्त्र में नहीं है उसकी शुद्धि चान्द्राध्या वत से होती है। मनुस्मृति अध्याय १२ श्लोक ४५ में लिखा है कि अनजाने पाप का प्रायश्चित होता है कोई २ जाने का भी कहते हैं, श्लोक १९० में लिखा है कि जो पापों का प्रायश्चित नहीं करते उन

को न छुये। चान्द्रायण ब्रत के बास्ते देखो मनुम्मृति अध्याय ११ रलोक २१७-२१८, याज्ञवल्क्य स्मृति अध्याय ३ रलोक ३२४, अत्रिस्मृति रलोक ११०, पाराशर स्मृति अध्याय १० रलोक २ और वशिष्ठ स्मृति अध्याय २३ रलोक ४०-४१।"

अहिंसा ही वैदिक कर्म है, हिंसा वैदिककर्म नहीं है यथा:-

अहिंसा वैदिकं कर्म ध्यानमिन्द्रिय संयमः। तपो ऽ थ गुरु शुश्रुषा कि श्रेयः पुरुषं पति १। हुति अनुशासन पर्वे अध्याय ११३।

नोट—इस प्रमाण से वेदों में जहां हिंसक कर्म है वह वेद कथित नहीं कहे जायँगे।

जो मनुष्य कर्म वचन मन से हिंसा करते हैं वह दुख से किस प्रकार छूट सकते हैं यथाः—

कर्मणा मनुनः कुर्वन् हिंसा पार्थिव सत्तम । वाचा च मनसा चैव कथं दुःखात्ममुच्यते ३ । पूर्वं तु मनसा त्यत्तवा तथा वाचा ऽ थ कर्मणा । न भक्षयति यो मांसं त्रिविधं स विमुच्यते ८ । दोषास्तु मक्षणे राजन्मांसस्ये इ निवोधमे १० । इति अनुशासन पर्व अध्याय ११४ । जितने धर्मशास्त्र हैं सब ने ऋहिंसा का ही प्रतिपादन किया है यथाः—

> श्रहिंसा तव निर्दिष्टा सर्व धर्मानुसंहिता १९। इति श्रनुशासन पर्व श्रम्याय ११४।

नोट—इस प्रमाण से थर्मशास्त्रों में जहां रं हिंसात्मक श्लोक श्राये हैं वह तत्तदिषि कृत नहीं कहे जायेंगे।

धार्मिक पुरुषों को मधु मांस और मद्य का खाना जम्म-पर्यंत छोड़ना आवश्यक है यथाः—

यधु गांस निरुत्येति पाद्यैवं रहस्पतिः १५ ।
मधु गांसं च ये नित्यं वर्जयंतीह धार्मिकाः ।
जन्म मभृति षद्यं च सर्वे ते मुनयः समृताः ७९ ।
इति श्रनुशासन पर्वे श्रध्याय ११५।

नोट - मधु !! मांस और मद्य से किसी अंश में मनुष्य को बितित बनाने में कमजोर नहीं है। वैष्याव इस पर ध्यान दें, मधु जो भगवत् को खिलाई जाती है और पीछे भगवद्भक्त खाते हैं, इससे भगवत् को मांस खवाना सिद्ध होगया, अतएव विचार-श्रीत वैष्णव मधु का भगवत्कर्भ में त्याच्य करें। क्योंकि मधु खांस न खाने को ही धर्म कहते हैं, (वर्जयेन्सधुमांसानि धर्मोद्धत्र

विधीयते ६३ इति अनुशासन पर्व अध्याय ११५) अन्यथा अधर्म है।

मनुष्य को जन्मपर्यंत मासर में अश्वमेध यज्ञ का जो फल मिलता है वह फुल मांस न खाने से मिलता है यथाः —

मासि मास्यश्वमेथेन यो यजेत शतं समः १६।

इति अनुशासन पर्ने अध्याय ११५।

श्रहिंसा ही सब धर्मी से बड़ा धर्म है यथाः—

श्रहिंसा परमो धर्मस्तथा ८ हिंसा परं तपः । श्रहिंसा पर्मं सत्यं यतो धर्मः पवर्तते २५ । इति श्रनुशासन पर्व श्रध्याय ११५ ।

श्चिति परमो धर्मस्तथा ऽ हिसा परो दयः। श्रिहिसा परमं दानमहिसा परमं तपः ३८। श्चिति परमो यज्ञस्तथा ऽहिसा परं फलम्। श्चिति परमं मित्रमहिसा परमं सुखम् ३९। सर्व यज्ञेषु वा दानं सर्व तीर्थेषु वा ऽऽध्नुतम्। सर्वदान फलं वा ऽपि नैतत्तुल्पमहिस्या ४०। श्चितिस्य तपो ऽ क्षयमहिस्रो जयते सदा। श्चिहिंसा सर्वे भूतानां यथा माता यथा पिता ४१। इति अनुशासन पर्वे अध्याय ११६।

नोट-३९ ऋोक से यह बात निकलती है कि हिंसा वाला यज्ञ न करे।

मांस तृण काष्ठ पत्थर धादि से पैदा नहीं होता किन्तु किसी जीव की देह काटने से पैदा होता है यथाः—

> न हि मांस तृणात् काष्टादुपलाद्वापि जायते । हत्या जतुं ततो मांसं तस्पादोषस्तु भक्षणे २६ । इति श्रनुशासन पर्व श्रध्याय ११५ ।

मांस देवतावों का भीजन नहीं है,राज्ञसों का भीजन है यथा:-

स्वाहा स्वधा ऽ मृतभुजो देवाः सत्यार्जव वियाः । क्रव्यादान् राक्षसान्विद्धि जिह्यानृत परायणान् २७।

इति अनुशासन पर्वो अध्याय ११५।

नोट - बेद शास्त्र श्रीर पुराणों में वाममार्गी धूर्त ब्राह्मणों ने श्रपने स्वाने के वास्ते देव श्रीर पितृ को मांस स्वान लिख मारा है। यदि मांस खाने वाले मांस न खायँ तो घातक लोग पशुश्रोंको क्यों मारें यथाः - यदि चैत्स्वादको स्थान्न तदा घातको भवेत्। घातकः स्वादकार्थाय तद्वघातयति वै नरः ३१।

इति त्रमुशासन पर्व ऋष्याय ११५।

जो मनुष्य दूसरे के मांस से अपने मांस को बढ़ाने की इच्छा करता है वह बड़े खराब नरकों में बास करता है यथा:--

स्वर्गासं पर गांसेन यो वर्षियतुं पिच्छति । चद्विग्न वासो वसति यत्र तत्राभिजायते ३६ ।

इति श्रनुशासन पर्व श्रध्याय ११५।

स्वामांसं परमांसेनयो बर्धियतुमिच्छेति । नास्तिक्षुद्रतरस्तरमात्सवृशंसतरो नरः ११ । इति श्रनुशासन पर्वे श्रध्याय ११६ ।

मांस भन्नण में दोष है इस वास्ते मांस न खाय यथाः—

इदन्तु खलु कौन्तेय श्रुतमासीत्पुरा मया। मार्कदेयस्य बदतो ये दोषा मांस मक्षणे २८। इति अनुशासन पर्व अध्याय १२५।

पशु के घातक यथाः-

धनेन क्रविको हिन्त खादकः चोपभोगतः। धातको वध वंधाम्यामित्येष त्रिविधो बधः ४०। ख्राहर्ता चानुपंता च विशस्ता क्रय विक्रयी। संस्कर्ता चोपभोगता च खादकाः सर्व येवते ४९।

इति अनुशासन पर्व अध्याय ११५। 🕂

नोट--- श्रनुमन्ता विशसिता निहंता क्रय विकयी। संस्कर्ता चोपहर्ता च खादकश्चेति घातकाः ५१।

इति सनुस्मृति अध्याय ५ ।

मांस का न खाना ही धर्म है यह बेद का कहना है यथाः
मांसस्या ऽ भक्षणो धर्मो विशिष्ट इति नः श्रुति ४३ । ऽ

इति अनुशासन पर्व अध्याय ११५ ।

+ पृष्ठ २१ भी देखो।

5 ३८ पृष्ठ की ११ पंक्ति से ३९ पृष्ठ के द्यांत तक देखों, २३ पृष्ठ की १३ पंक्ति से २४ पृष्ठ की ७ पक्तितक देखों, १२ पृष्ठ का ५६ श्लोक देखों। जो बेद शास्त्र पुराण खोर सूत्रों में हिंसा दिखाइ देती है वह वाममार्गी धूर्त ब्राह्मणों की मिलाई है इसके परिचय में "देवीवलिपाखरूड" देखों।

पशु वातक महापापी होता है यथाः--

खादकस्य कृते जंतून्यो इन्यात्युरुषाथमः। महादोषतरस्तत्र घातको न तु खादकः ४६।

इति अनुशासन पर्वे अध्याय ११५।

संसार में प्राण से प्रिय श्रीर बस्तु नहीं है इस वास्ते मनुष्यों को जीवों पर दया करना चाहिये यथाः—

नहिं प्राणात्पिय तरं लोके किश्च न विद्यते। तस्पादयां नरः कुर्याद्यथा ऽऽत्यनि तथा परे १२।

इति ऋनुशासन पर्वे ऋध्याय ११६

मांस खाने वाला महापापी होता है, और मांस के छोड़ने में पुण्य होता है क्यों कि मांस बीर्यसे पैदा होता है यथाः—

> शुक्राच तात संभृतिमासस्ये ह न संशयः । भक्षाये तु महान्दांची निष्टत्या पुण्यमुच्यते १३ ।

> > इति अनुशासन पर्व अध्याय ११६।

्र श्राहंसा ही धर्म का लच्चण है यह धर्मविन परिडत कहते हैं यथाः— ऋहिंसा लक्षणो धर्म इति धर्म विदो तिदुः २१। इति अनुशासन पर्व अध्याय ११६।

पाण दानात्परं दानं न भूतं न भविष्यति । नह्यात्मनः वियतरं किंची दस्तीह निश्चितम् २६ ।

इति अनुशासन पर्वे अध्याय ११६।

मांस शब्द का अर्थ यथाः -

पांसं च भक्षयते यस्पाद्मक्षयिष्येतमप्यहम् । एतन्मांसस्य पांसत्वमनु बुद्धचस्य भारत ३५ ।

इति महाभारत अनुशासन पर्व अध्याय ११६।

😝 ऋथ श्राद्धवित निषेध 😂

मांस से श्राद्ध ऋधर्मी करते हैं खौर खन्न फूल फलादिसे श्राद्ध धर्मात्सा करते हैं यथा:—

> देशकाले च संप्राप्ते मुन्यन्नं हिर दैवतम् । श्रद्धया विधिवत् पात्रेन्यस्तं कोमधुकक्षयम् ५ । देवर्षि पित्ं भृतेभ्यः द्यात्मने स्वजनाय च । त्रान्नं संविभन्नन पश्येत् सर्वे तत्पुरपात्मकम् ६।

न दघादामिषं श्राद्धे न चाद्याद्धमं तत्वित्।
मुन्यन्नैः स्यात् पराभीतिर्यया न पशु हिंसवा७।
नैतादृशः परोधमों नृतां सद्धर्ममिच्छताम्।
न्यासो दंडस्य भूतेषु नोवाक्त्वाय जस्ययः ८।
तस्मादृदैवोपपन्नेन मुन्यन्नै नापि धर्मवित्।
संतुष्टो ऽहरदः कुटर्यान्नित्य नैमित्तिकीः क्रियाः ११।

इति भागवत स्कंध ७ श्राध्याय १५।

क्रयोदहरहः श्राद्धमन्नाद्ये नोदकेन वा । पयोम्दा फर्लोबोपि पितृभ्यः पीति मावहन् ४ ।

इति मत्स्य पुराग्। श्रध्याय १६।

नोट-मनुस्मृति अध्याय ३ रलोक ८२ श्रीर पद्मपुराण सृष्टि खंड अध्याय ९ रलोक अ में भी ऐसा ही है जैसा कि ४ रलोक में है। मार्कंडेय पुराण अध्याय २८ रलोक ९ में लिखा है कि योनियां में भी पितरों को जल श्राद्ध पहुँचता है। पूर्व में श्राद्ध न करें यथा "पूर्जेषु करतोयाया न देयं श्राद्ध मुच्यते १० इति ब्रह्मपुराण अध्याय १११"। पितृ यझं करिष्यन्ति दंभार्थं ब्रह्मणाः कली ३० इति पद्म पुराण किया योग सार खंड अध्याय २६। श्राद्ध में अत्र देवे यथाः— श्रुणुयाच्छावयेच्छाद्धे त्राह्मणानयो पहामुने । अक्षयमन्त दानं च पितृ,णामुपतिष्ठति ५३।

इति शिवपुराण उमा संहिता ऋध्याय ११।

जब कि पितृ कार्य और वैदिक कर्म करने वाले को ऋहिंसक होना चाहिये, तो फिर मांस का पिंड पितरों को कैसे देसकते हैं यथा:-

> युक्ता क्षमा द्याभ्यां च क्षांत्या युक्तश्च तत्विद् । द्यहिंसा हित चित्तश्चमाईचे च तथास्थितः ७ । द्रह्मचार्य समायुक्तस्त्रयो योग समन्वितः । युक्तः स पितृ कार्येषु युक्तो वैदिक कर्माषु ८ ।

> > इति पद्मपुराण सृष्टि खंड ऋष्याय ३२।

नोट-योग में पहिले यम लिखा है, और यम में पहिले अहिंसा लिखा है-इस प्रमाण से पितृ को मांस का पिंड देने वाले पाखंडी हैं, और ऐसा श्राद्ध करानेवाले पण्डित इन्द्री लोलुप हैं।

जो ब्राह्मण पितरों को रोज तर्पण नहीं करता और संध्या नहीं करता वह अपने पितरों को नरक में पटकता है यथाः तर्परोश्च विनिर्मुकः पितृखामेव नित्यणः । पितृ हानरकं याति संध्या हीनस्तु विव हा १०।

इति पद्मपुराण सृष्टि खरड अध्याय ४०।

जो पितृ भक्त नहीं होते वो नरक को जाते हैं यथा:--

पितु भक्ति विद्वीनाये दिने तिष्ठति मानवाः। तावत्करूप सदस्तं तु तिष्ठति नरके जनाः ९६।

इति पद्मपुराण क्रिया योग सार खरड ऋध्याय ३।

नोट - जो श्राद्ध कर्ता और भोक्ता श्राद्ध के दिन मैथुन करता है

तो उसके पितृ १ माह तक श्रुक (बीर्य) में रहते हैं,

ऋौर जो पुरुष मैथुन करके श्राद्ध में श्राहार करता है

तो उसके पितृ एक मास तक रेत मूत्र भन्नण करते

हैं, इससे श्राद्ध में १ दिन पहिले ब्राह्मणों को निमन्त्रण
देना चाहिये देखो मार्कएडेयपुराण श्रध्याय ३२ से ३४ तक। यदि

उस रोज स्त्री वर्जित ब्राह्मण न मिले तो श्रभ्यागत यति श्रादि

को ले, देखो उक्त ३२ से ३४ श्रध्याय तक के बीच में ३५ वां श्लोक।

राजश्यामा कश्यामाकौ तद्वच्चैव पशातिका । चीवाराः केशकराश्चैव वन्यामि पितृ तृप्तये ९ । यवजीहि स गोधूम तिल सुद्राः स सर्पयाः । पियंगवः कोद्रवाश्च निष्यावाश्चाति शोभताः १०। इति मार्करुडेय पुराग अध्याय २९।

श्रर्थ-समाराज, स्यामक, पसाइ के चावल, नीवार, पौषकल, ये श्रन्न पितरों को परम प्रसन्नदायक हैं ९। इनके श्रातिरिक्त यव, त्रीहि, गेहूं, तिल, मूंग, सरसों, प्रियंगू, कोविदार, निष्याव भी श्रात्यन्त वृप्त जनक है १०।

> नमस्ये ऽ हं पितृ ृत्वैश्यैरच्येते श्रुवि ये सदा । स्यकर्माभि रतैर्नित्यं पुष्प धूपान्न वारिभिः २२ । इति मान्नेण्डेय पुराण अध्याय ९३।

श्चर्य-श्चपने कर्म में श्चाराक्त वैश्यगण पृथिवी में जिसको पुष्प धूप श्चन्न श्चौर जल द्वारा संतुष्ट करते हैं उन पितरों को नमस्कार करता हूँ २२।

सोमस्य ये रिष्मिषु ये ८ की विवे ,

• शुक्के विमाने च सदा बसंति ।

तुष्यन्तु ते ८ स्मिन्पितरो ८ न्नतोये,

र्गन्धादिना पृष्टिमितो ब्रजन्तु ३१ ।

इति मार्कण्डेयपुराण श्रध्याम ६३ ।

अर्थ-जो सदा चंद्रमा की किरणों में, सुर्य विव में. और शुक्त विमान में वास करते हैं वह पितृगण मेरे द्वारा तृप्त हों और वह अस्र जल तथा गंधादि द्वारा पुष्टि को प्राप्त हों ३१।

ते ऽ स्मिन्समस्ता मम पुष्प गंध,
ध्रुपान्नतोयादि निवेदनेन ।
तथाग्नि होमे न च यांतु तृप्तिं,
सदा पितृभ्यः मणतो ऽ स्मितेभ्यः ३७।

इति मार्करडेयपुराण अध्याय ९३।

श्रर्थ-वह संपूर्ण पितृगण मेरे पुष्प गंध धूप श्रन्न श्रीर जलादि निवेदन तथा श्रम्नि होम द्वारा मुक्तसे तृप्त हों, श्रीर मैं सदा उन पितरों को प्रणाम करता हूँ ३७।

पितर ब्रह्मचारी होते हैं पुनः शौचाचारी भी हैं यथा:-

श्रद्रोधनाः शौचपराः सततं ब्रह्मचारिणः । न्यस्तशस्त्रा महाभागाः पितरः पूर्वदेवताः १९२ ।

इति मनुस्मृति ऋध्याय ३।

श्रौर ब्रह्मचारी को प्राणिहिंसा मांस मधु खाना निषेव है यथाः— वर्जयेन्मधुमांसं च गंधं मात्यं रसान्स्रियः । शुक्तानि यानि सर्वाणि प्राणिनां चैवहिंसनम् १७७। इति मनुस्मृति अध्याय २।

नोट-याज्ञवलक्यसमृति अध्याय १ स्रोक ३३ में प्राय: ऐसा ही है।

रात्रि में श्रीर दोनों सन्ध्यावों में श्राद्ध नहीं करना चाहिये यथाः—

रात्रौ श्राद्धं न कुर्वीत राक्षसी कीर्तिता हि सा। सन्ध्ययोष्टभयोश्चैव सूर्ये चैवाचिरोदिते २८०।

इति मनुस्मृति श्रव्याय ३।

१ नोट—लघुहारीतस्मृति ऋोक १०२ और वृहद्विष्णु स्मृति अभ्याय ७७ ऋोक ८ में प्रायः ऐसा ही है। लघुहारीतस्मृति ऋोक १०३ में लिखा है कि प्रहणमें किसीसमयमें भी श्राद्ध करनेसे अच्चय फल मिलता है। अतिस्मृति ऋोक ३५७-३५८ में लिखा है कि जो गृहस्थ कन्या के सूर्य (कुवाँर) होने पर श्राद्ध नहीं करता है पितरों की लंबी स्वास से उसका धन पुत्र और कुल नष्ट हो जाता है आगे ३६० ऋोक तक देखो। गया में श्राद्ध करने का विशेष फल है देखो लिखितस्मृति ऋोक १२ और विसन्दरस्मृति अध्याय ११ ऋोक ३९। विवाही हुई स्त्री से विवाह करनेवाले ब्राह्मण को

श्राद्ध में न खवावे ऐसा मनुस्मृति अध्याय ३ श्लोक १६६ में लिखा है। अत्रिस्मृति श्लोक ३४४ में लिखा है कि हिंसक ब्राह्मणको श्राद्ध में न ले।

२ मोट-जब कि मनुस्मृति अध्याय ४ श्लोक ६६ में लिखा है कि "प्रेत घूमो वर्ज्य" (५८ पृष्ठ का ६० श्लोक भी देखों) याने मुदें की धुंवा को बर्ज दे और श्लोक ११६ में लिखा है कि जाहमण रमसान के समीप (वेद पाठ न करें) श्लाह्म न ले। तो जाह्म गादि जो मनुष्य, मुदें को खाते हैं उनको क्या कहा जायगा। और मुद्री उसको कहते हैं कि जिस जीवधारी प्राणी के शरीर से प्राण वायु निकल गई हो चाहै वह मनुष्य हो वा पशु हो वा पन्नी मछली आदि कोई भी हो।

न श्राद्धे ह्यामिषं देयं पितृणां च कदाचन ।
न चा SS मिषाशिनः पित्र्ये यष्ट्वयाः श्राद्ध कर्मणि५५।
न च मांसाशिनः शैवाः शाक्ताश्चापि ह्यवैदिकाः ५६ ।
ना SS मिषं न मधु मोक्तं खड्गपात्रं न चैव हि ।
नैकादश्यां प्रकर्तव्यं न तिर्यवपुणड् धारणम् १३६ ।

इति नारदपञ्चरात्रान्तर्गत वृहद्ब्रह्मसंहिता पाद ४ श्रध्याय ४।

ब्रह्मागड पुराण।

श्रिप च—
गन्य पृष्पेश्च घूपेश्च जपाहुतिभिरेव च ४७ ।
फत्तम्ता नमस्कारैः पितृणां प्रयतः श्रुचिः ।
पृजां कृत्वा द्विजान्पश्चात्पृजयेदन्न संपदा ४८ ।
श्रुना प्रकारान शुचीन साधून,

संवीक्षते नो स्पृशंश्वापिद्यात् ८४। इति मध्यभाग उपोद्धातपाद अध्याय ११।

पुष्पाणां च फलानां च भक्ष्याणामन्नतस्तथा।
अप्रमुद्धभृत्य सर्वेषां जुहुयाद्धव्यवाहने ३७।
भक्ष्यमन्नं तथा पेयं मूलानि च फलानि च।
हुत्वाञ्जनौ च ततः पिंडान्निवपेदक्षिणा मुखः ३८।
इति मध्यभाग उपोद्धातपाद अध्याय १२।

विधि पूर्वेक अन्न का ही पिंड श्राद्ध में दे यथाः—
श्राद्धे सङ्करिपतं चानं तस्मै दत्तं विधानतः ३२।+
इति वाराह पुराण अध्याय १८६।

⁺ मृतमश्रीत्रियं श्राद्धं मृतो यज्ञस्वद्त्तिणः ८४। इति महाभारत वनपर्व अध्याय ३१३।

मनुष्य अन्नहीं से श्राद्ध करें और श्राद्ध शब्दका अर्थ भी यहीं होता है यथा:—

> यथा संभिवनाऽस्नेन श्राद्धं श्रद्धा समन्वतः २०। क्ष इति त्रह्मपुराण अध्याय १११।

अन आदं ततः कुर्याद्यादानंद्विजोत्तमे २२। इति गरुड़ पुराण उत्तर खण्ड अध्याय १५।

सर्वेषामेव दानानां शाद्ध दानं विशिष्यते ३६६। श्राद्धं कृत्वा तु मृत्यों वै स्वर्ग लोके महीयते ३६०।

इति स्वित्रसृति। श्रु विशेष कर श्राद्ध में वर्ज्य यथाः— मत्स्य सूकर कूर्माश्च गावो वर्ज्या विशेषतः १०४। इति ब्रह्मपुराण अध्याय ११२।

परन्तु यह ध्यान रहें कि—रात्रि में श्राद्ध कभी भी न करें, इस का निषेध हैं यथाः— रात्रो श्राद्धं न कुर्वीत राज्ञसी कीर्त्तिता हि सा १। इति भविष्य पुराश ब्राह्मपर्वा अध्याय १८५।

८१ एष्ठ का २८० स्रोक भी देखो।

आद में फल फूल अन्नादि पित्रों को देना चादिये यथा।—

यानि तस्यैव भोज्यानि मृतानि च फतानि च ।
यानि कानि च भक्षाणि नवश्च रस संभवम् १९ ।
सन्त्वा यथा सुखं वाच्य मुद्धीरस्ते ऽपि वाग्यताः ।
स्मनिष्टं इविष्यश्च दद्यादकोषनोत्वरः ।
स्मनिष्टं वृष्टास्य क्षेपश्चवानुमन्य च ।
सन्न्नं विकरेद्वभूमौ दद्याचापः सकृत् सकृत् २१ ।
सर्वयन्यमुपादाय सतितां दक्षिणा मुखः ।
सर्वयन्यमुपादाय सतितां दक्षिणा मुखः ।
सर्ववन्यमुपादाय सतितां दक्षिणा मुखः ।
सर्ववन्यमुपादाय सतितां दक्षिणा मुखः ।
सर्ववन्यमुपादाय सतितां दक्षिणा मुखः ।

सूप शाक फलानीक्षून पयोदिध घृतं मधु ६२। द्याननश्चेव यथा कामं विविधं भोज्य पेयकम् । पद्यदिष्टिं द्विजेन्द्राणां तत्तत् सर्वविनिवेदयेत् ६३।

शातातपसमृति श्लोक ९४ में लिखा है कि बिना प्रहण के रात में श्रीर दोनों सध्याश्रों में कभी भी श्राद्ध नहीं करना चाहिए। ८१ पृष्ठ की १३ पंक्ति भी देखों। धान्यास्तिलांश्च विविधान शर्करा विविधास्तथा । उष्णमन्नं द्विजातिभ्यो दातन्य श्रेयमिच्छता । अन्यत्र फल मुलेभ्यो पानकेभ्यस्तथैव च ६४ ।

इति कूर्म पुराण उत्तराई अध्याय २२।

अपिचालम्-

निकम्मे लोग ही जीवों के मांसका पिंड पित्रोंको देतेहैं यथा:-

इहत्पाराशरस्तु मांसं निषेधितः—
 यस्तु पाणि वधं कृत्या मांसैस्तर्पयते ×िपतृ न् ।
 सिवद्वांश्चन्दनं दग्ध्वा कुर्यादङ्गार विक्रयम् १।

🕸 वृहत्पाराशरसंहिता ऋध्याय ५।

×ये तो सब ही आंख से देखते हैं कि पशुमें रेत मृत्र विष्टादि मल रहते हैं मांस खाने वाले के खाने में यह चीजें अवश्य आयेंगी और वृद्धहारीतस्पृति अध्याय ९ श्लोक २५९ में लिखा है कि जो अज्ञानता से भी रेत मृत्र विष्ठा खाय तो उसका प्रायिश्वत करे, इससे पशु मांस खाना अवश्य निषिद्ध है, इसे निषिद्ध! मनुष्य पितृ और देवता ही खाते हैं। सिप्त्वा कूपे यथा कश्चिद्वात आदातुमिच्छति । पतत्यज्ञानतः सोपि मांसेन आद्ध कृत्तया २ । इति निर्णयसिंघु तृतीय परिच्छेद आद्ध प्रकरण ।

प्रेत कर्म किया, अर्थात् मरेहुए मनुष्य को जलाने आदि के बाद अशीचमें जो पिण्डादि दिये जातेहें वेभी मांस रहित दे यथा:-

दातव्योतुदिनं पिंडः पेताय श्रुवि पार्थिव । दिवा च भक्तं भोक्तव्यस्मांसं मनुजर्षभ ११ । इति विष्णुपुराण श्रंश ३ अध्याय १३।

मांस खाने वाला गीघ होता है यथाः— गांसंग्रुघः ६ ।

इति गरुड़पुराण पूर्वस्वयड ष्ट्रध्याय १०४।

[दुर्मिल]

जब कर्म तजे जिनने अपने तब पाप अनेक करें न करें। जब बोलत फूठ न लाज लगी तब आज कि काल मरें न मरें। मिद्रा मितमंदिन पीय लियो जिनके मुख धूर भरें न भरें। मिक्री अरु मांस भखों जिनने मल को मुखमाहिं धरें न धरें १। (नागर) नोट-इस प्रमाण से पितृ देवता और मनुष जो मांस खाते हैं इन्हें मरने पर गीध होना चाहिये।

जो अनजाने में भी मांस खा ले तो वह प्रेत होता है यथाः— अज्ञानाद् अक्षयन् मांसं स प्रेतो जायते नरः ६०। इति गरुड़पुराण उत्तरखण्ड अध्याय २२।

नोटः—देवता पितृ मनुष्यादि जो जानके मांस खायगा वह तो अवश्य ही महा प्रेत (भूत)और गीघ होगा इसमें संशय नहीं।

कित्युग में मांस से श्राद्ध विजित है यथाः—
पृथ्वी चन्द्रोदयस्तुः—
श्रक्षता गीपशुश्चैव श्राद्धे मांसं तथा मधु ।
देवराच सुतोत्पत्तिः कत्तौ पश्च विवर्जयेत् ।

इति निगमोक्तेः। इति निर्णयसिन्धु कत्ति वर्ज्यः।

कित्रयुग में मधुपर्क पशु वध मांस का श्राद्ध निषेध है यथाः— देवराच सुतोत्पत्तिर्मधुपर्के पशोर्वधः । सांसादनं तथा श्राद्धे वानपर्धाश्रमस्तथा १४। इति वृहस्रारदीयपुराण पूर्वाखण्ड अध्याय २४। श्राग्निहोत्र मांस से श्राद्ध कित्युगमें वर्जनीय है यथाः— श्राग्निहोत्रं गवालंभं सन्यासं पत्तपैतृकम् । देवराश्च सुतोत्पत्तिः कलौपंच विवर्जयेत् ।

इति निर्णयसिन्धु कलि वर्ज्यान्तरगत निगम का वचन। नोट- ३३ पृष्ठ की १ पंक्ति देखो।

पांच हजार वर्ष किलयुग जाने पर श्राद्ध तर्पण नेदोक्त कर्म पृथ्वी से उठ जांयगे यथा:—

साधवश्च पुराणानि शंखानि श्राद्ध तर्पणे।

वेदोक्तानि च कर्माणि ययुस्तैः सार्द्धमेव च १२।

इति देवीभागवत स्कन्व ९ ष्रध्याय ८।
वेदोक्तानि च पुराणानि शंखाश्च श्राद्ध तर्पणम्।
वेदोक्तानि च कर्माणि ययुस्तः सार्द्धमेव च १२,।
वैद्यावश्च पुराणानि शंखाश्च श्राद्ध तर्पणम्।
वेदाग्नि च शास्त्राणि ययुस्तैः सार्द्धमेव च १४।
सहवश्च सत्वं धर्मश्च वेदाश्च ग्रामदेवताः।

व्रतं तपस्यानशनं ययुस्तैः सार्द्धमेव च १५। इति ब्रह्मनैवर्तपुराण प्रकृति खण्ड श्रभ्याय ७। कलौ दश सहस्राणिहरिस्तिष्ठतिमेदिनीम् । देवानां प्रतिमा पूज्या शास्त्राणि च पुराणकम् ३२। तदर्द्भापि तीर्थानिॐ गंगादीनि सुनिश्चितम् । तदर्द्दं ग्रामदेवाश्च वेदाश्च विदुषामपि ३३। इति ब्रह्मवैवर्त पुराण श्रीकृष्ण जनमखण्ड श्रध्याय ९०।

इससे इस वक्त जो ब्राह्मण श्राद्ध यज्ञ करता है वह दूसरे के दिखाने को पाखण्ड करता है यथाः—

पितृ यज्ञ करिष्यंन्ति दंभार्थे ब्राह्मणः कलो ३०। इति पद्मपुराण क्रियायोगसारखंड अध्याय २६।

किलयुम में त्राह्मणादि वर्णां को मदिरा पीना मना है यथाः-

नाराश्वमेधी मद्यक्ष कली वर्ज्य दिजातिभिः। ऽ

क्ष तीर्थ बासी महापापी भगेत्रत्रान्य बंचात् । तत्रैव ऽऽ चरितं पापमानत्याय प्रकल्पते ३५। इति देवीभागवत स्कन्ध ४ अध्याय ८

S जिन रलोकों के नीचे अन्थ का नाम नम्बर नहीं है, तो नीचे जहां पर अन्थ का नाम निकले उसी अन्थ का वह रलोक मानना। नाट-शूद्र को वेदोक्त कभा का श्रधिकार ही नहीं है।

वर श्रातिथि श्रौर पितरों के वास्ते पशु का मांस किलयुग में वर्जित है यथाः—

वरातिथि पितृभ्यश्च पशूपाकरण क्रिया।
पशु मारना हिंसा का यज्ञ और मांस का वेचना ये ब्राह्मणः
को निश्चय करके कलियुग में मना है यथाः—

शापित्रं चैव विपाणां सोम विक्रयणं तथा।

इति निर्णयसिंधौ तृतीय परिच्छेद कलि वर्ज्य श्रंक ८४।

कलियुग में श्राद्ध में मधु न देवे यथाः—

कलौ श्राद्धे मधु नैव देयम्।

कित्युग में श्रास्यता गौ (बिछिया) पशु मांस मधु! यज्ञ श्राद्ध में न देवे यथाः—

> श्रक्षता गो पशुश्चैव श्राद्धे मांसं तथा मधु। देवराश्च सुतोत्पत्तिः कलौ पंच विवर्जयेत्।

इति निर्णायसिंधु चतुर्थ परिच्छेर श्राद्ध निर्णाय श्रंक १ में श्राद्धदीपकलिका श्रीर मदनपारिजात का बचन । नोट-सृतक सृतक श्राद्धादि का अन्न खाके प्रायश्चित करना • चाहिये, देखा ६१ पृष्ठ के खाके ४७-५९। अ

कलियुग में बेदों की नाश हो जायगा यथा:-

वेदा नश्यन्ति वे कलो १७।

इति मत्स्यपुराण ऋच्याय ११४।

क्ष जो मनुष्य पाप करता है श्रीर उसका प्रायश्चित नहीं करता पुनः परचाताप भी नहीं करता वह दारुग कष्ट देनेवाले नरकों में जाता है देखो याज्ञवल्क्यरमृति श्रध्याय ३ श्लोक २२१ श्रीर श्लोक २२ से २४ तक में लिखा है कि तामिस्न १ लोहशंकु २ महानिरय ३ शाल्मिल ४ रौरव ४ कुड्मल ६ पूर्तिमृतिक ७ कालस्त्रक ८ संघात ९ लोहतोदक १० सविष ११ संप्रपातन १२ महा नरक १३ काकोल १४ संजीवन १४ महाप्य १६ वीचि १७ श्रम्धन्य तामस्न १८ कुंभीपाक १९ श्रासिपत्रवन २० श्रीर तापन ये २१ नर्क हैं। नरकोंके विषयमें श्रागे मनुस्मृति श्रध्याय ४ श्लोक ८८ से ९० तक। भागवत स्कन्ध ५ श्रध्याय २६ श्लोक ०। ब्रह्मपुराण श्रध्याय २० श्लोक १ से ५ तक। नारवीयपुराण पूर्वभाग श्रध्याय १५। श्रीर शिवपुराण उमासंहिता ८ श्रध्यायसे १० श्रध्याय तक देखो।

तथाः—
किलयुग में बेदों का विनाश हो जायगा यथाः—
विनश्यन्ति ततः कलो १८।

इति ब्रह्माग्डपुराण पूर्वभाग श्रमुषङ्गपाद श्रध्याय ३१ ।

नोट — इस समय टोदों का नाश हो गया, चारों बेदों की सब
११७२ शाखा हैं जिनमें ९ शाखा वर्त्तमान में मिल रही
हैं तिनका नाम भी नहीं है, सब शाखावों के नाम होते
हैं। ये नवशाखा भी वाममागियों की नष्ट भ्रष्ट की हुई हैं,
विचार किया जाय तो ये नव शाखा भी न होने ही में
शुमार हैं इन शाखाश्रों से वर्णाश्रम का कोई धर्म कर्म
नहीं चल सकता।

श्राद्ध का लक्षण या श्राद्ध शब्द का श्रर्थ यथाः—
श्रद्धया दीयते यस्मात् श्राद्धं तेन निगद्यते ।
इति पुलस्त्य वचनात् श्रद्धया श्रन्नाद्ये दानं श्राद्धं
इति वैदिक प्रयोगाधीन योगिकम् । इति श्राद्धं तत्वं।

इति शब्दकल्पद्रुम श्राद्ध शब्दान्तरगत।

श्राद्ध में न लेने योग ब्राह्मण यथाः—

मद्यपो अन्द्रषत्ती सक्तो वीरहा दिधि पूपति:। श्रागारदाही कुएडाशी सोम विक्रियिगो द्विताः ३६। अप्परिवेत्ता तथा हिंस्रश्च परिवित्तिर्निराकृतिः। पोनर्भवः कुसीदश्च तथा नक्षत्र दर्शकः ३७।+

इति कूर्म पुराण उत्तराई अध्याय २१।

श्रवैष्णवाश्च ये सर्व्वे श्राद्धार्श न कदाचन ७। इति गरुड़ पुराण पूर्व खरुड श्रध्याय ९९। श्रचक्रधारिणं विशं यः श्राद्धे भोजयिष्यति । रेतो मूत्र पुरीषादि पितृभ्यः संपच्छति ७ ।

अ जो ब्राह्मण समुद्र पार गया हो नौकरी करताहो किसी प्रकार का पापी हो त्र्यौर चातुर्यता से सत्य बनाके भूठ बोलने वाला (वकीलादि) हो उसे श्राद्धमें न ले यथाः—

समुद्रां तरितो भृत्यः पिशुनः कूठ सान्तिकः ३२। इति ब्रह्माडपुराण मध्यभाग उपोद्धातपाद अध्याय १९।

+ दानेन सुत्तभो धर्मो यममार्गः सुखावहः।
दान पुण्यं विना वत्स्य न गच्छेद्धर्म मंदिरम् १०।
इति गरुड़पुराण उत्तर खण्ड ऋध्याय १९।

शङ्ख चक्रोध्वं पुराद्यादि रहतो ब्राह्मशोधमः । सनीवनेव चार्यडालस्तर्व धर्म वहिष्कृतः ८ । तस्माचक्रादि संस्काराः कर्तव्या मुनि सत्तमः । चक्रलांछनहीनेन कृतं कर्मं च निष्फलम् ९ ।

इति पाराशरीय धर्मशास्त्र उत्तरखण्ड ऋध्याय १।

श्रवैष्णवास्तु ये विषाः पाखण्डास्ते नराधमाः । तेषां तु नरके वासः कन्य कोटिशतैरिय २५। श्रवक्रधारी यो विषो बहु वेद श्रुतोऽिय वा । सजीवस्रेव चाण्डालो मृतो निरयमास्र्यात् २७। तस्मात्तापादि संस्काराः कर्तव्या धर्मकांक्षिणा । श्रयमेव परो धर्मः । प्रधानः सर्व कर्म्मणाम् २८।

इति वृद्धहारीतस्मृति धर्मशास्त्र अध्याय १।

अवैष्णवस्तु यो विषः सर्व धर्षं युतोऽपिवा । स पाखण्डेति विज्ञेयः सर्व कर्म नाईति ३२ ।

[‡] मुक्तिद्वारमितो नास्तिः विनाचक्राङ्क धारणम् १०९। इति नारद्वञ्चस्त्रान्तर्गत वृहद्बद्वससंहिता पाद १ अध्याय२।

शङ्ख चक्रोध्वेपुएड्।दि रहितं ब्राह्मणं नृप । यः श्राद्धे भोजयेद्विमः पितृ णां तस्य दुर्गतिः ४२ । रुद्रार्चनं त्रिपुंड्स्य अधारणं यत्र दृश्यते । तस्कू (स श्रू)द्राणां विधिः मोक्तो न द्विजानां कदाचन४४।

अभिनेत्यमशुभं प्रोक्तमस्प्रस्यं हि कदाचन । विधिह्येष द्विजातीनां नेतरेषां कदाचन ७५ । शिवार्चन जिपुरेष्ट्रं च शुद्राखां च विधीयते । त्विद्धियानामिदं ये च विष्राः शिव परायखाः ७६ । ते वै देवलका क्षेत्राः सर्व कर्म वहिष्कृताः ७७ ।

इति वृद्धहारीतस्मृति धर्मशास्त्र अध्याय ८।

भवत्रतथरा ये च ये च तान् समनुव्रताः । पाखिष्डितस्ते भवन्तु सच्छास्त्र परिपन्थिनः २९। नष्ट शौचा मूढ् धियो जटा भस्मास्थि धारिगः। विशंतु शिवदीचायां यत्र दैवं सुरासवम् ३०।

इति भागवत स्कन्ध ४ अध्याय २।

जटा धारण करने वाले को श्राद्ध में न ले, देखो अत्रिस्मृति रत्नोक ३४५ और मनुस्मृति अध्याय ३ रत्नोक १४१। प्रति लोगानु लोगानां दुर्गागण सु भैरवाः ।

प्रतीया यथाईण विस्व चंदन घारणम् ४५ ।

यक्ष राक्षस भूतानि विद्याघर गणास्तथा ।

चाणडालानामर्चनीया मद्य मांस निषेत्रणाम् ४६ ।

दहार्चनाद्दबाह्मणस्तु श्रुद्रेण समतां व्रजेत् ।

यक्ष भूतार्चनात्सद्यश्चाणडालत्वमदाप्तुयात् ४७ । ×

न अभस्म घारयेद्विमः परमापद्दगतो ऽ पि वा ।

प्रेतान्भृत गर्णांश्चान्ये यजन्तेतामसा जनाः इति गीता१७।४।
क तमसो भस्म रजसो गन्यः सत्वस्य मृतिका ।
तस्माद्भसादि भिर्नेच्छेदेकान्ती शुद्धिमात्मनः ४४ ।
इति नारदपञ्चरात्र भरद्वाज संहिता अध्याय ३ ।

दैवे पित्र्ये न वै पूज्या जटा सस्मादि धारिएः ६२।

इति नारदपञ्चरात्रान्तरगत बहद्ब्रह्मसंहिता पाद ४ ऋध्याय ४।

वित्राणामूर्छपुरब्र्ंस्यात्तिलकंतु महीभृतः।
पहाकारन्तु वैश्यानां श्रृहाणां वै त्रिपुरब्रुकम् १५।
ब्राह्मणः कुलजो विद्वान् भस्मधारी भवेद्यदि।
वर्जयेत्ताहशं देवी मद्योच्छिष्टं घटं यथा १९।

महाहैविभृयाचो वै स सुरायो भवेद्ध वम् ४८।
तिर्यक पुराद्धरं विभं पहाकार घरं तथा।
रवपाकेमिव नेक्षेत न संभाषेत कुत्रचित ४९।
-तस्माद्वद्विजाति भिर्धार्यमूर्ध्वपुराद् विधानतः।
मृदा ग्रुभ्रेण सततं सांतरालं मनोहरम् ५०।
आखंहोमस्तथाः दानं स्वाध्यायः पितृ तर्पणम्।
भस्मी भवति तत्सर्ध्वपुराद् विना कृतम् ६०।
ऊर्ध्वपुराद् विना यन्तु आखं कुर्वीत् सद्विजः।
सर्भे तद्राक्षसैनीतं नरकं चाथि गच्छति ६१।

त्रिपुरिं ग्रुट्स कल्पानां श्रुट्साणां च विधिस्तथा। त्रिपुरिं धारणाः विष्ठः पतितः स्यान्न संशयः २०। इति पद्मोत्तरखरिं अध्याय २२५। उद्धपुरिं देरेलं जलाटे यस्य दृश्यते। चारिंडालोपि विशुद्धातमा कूच एव न संशयः २२।

इति पद्मो पातालखंडे अध्याय ७९। अपने आश्रम के अनुसार चिन्ह को धारण करें, जो अपने आश्रम के चिन्ह को धारण नहीं करता वह प्रायश्चिती के तुल्य है और वह आश्रमी नहीं कहाता इति दक्तस्मृति अध्याय १ श्लोक १३-१४। उद्धर्मपुष् विहीनं तु यः श्राद्धे भोनयेद्विनम् । अवस्ति वितरस्तस्य विष्मृत्रं नात्र संशयः ६२ । तस्पात्तु सततं धार्यमूर्ध्वपुढ्ं द्विजन्पना । धार्ययेन्न तिर्यक्षपुण्ड्मापद्यिष कदाचन ६३ । तिर्यक्षपुण्ड् धरं विश्रं चाण्डालाम्ब संत्यजेत् । स्रो ऽ नर्दः सर्व कृत्येषु सर्व लोकेषु गर्हितः ६४ । इति बृद्धहारीतस्मृति धर्मशास्त्र अध्याय २

श्राद्ध में न लेनेयोग्य ब्राह्मण यथाः— परमापदागतो ऽ पि न श्रुद्धीत होर्दिने । न तिर्यग्यारयेत्पुणड्ंनान्यदेवं प्रपूजयेत् २६० । वैष्णवः पुरुषोयस्तु श्रिय ब्रह्मादि देवताः । प्रणमेताचयेद्वा ऽ पि विष्ठायां जायते क्रिमिः २६१ । †श्रवैष्णानः स्याद्यो विषो बहुशास्त्र श्रुतो ऽ पि वा । स जीवन्नेत्र बांडालो मृतः स्वान ऽ भिजायते २७८ ।

[†] असाधु ब्राह्मण को जो भोजन कराये जाते हैं उनको वि-द्वान लोग मेर रुधिर मांस मजा और हड्डा के समान मसकते हैं. देखों मनुम्मृति अध्याय ३ स्ट्रोक १८२। मांस खाने वाले का अब न खाय, मनु ४ १२१३ और योज्ञवल्क्य १। १६०।

§शंख चक्रोध्वंपुराद्यादि रहितं ब्राह्मणाधमम् ।
पूजियण्यति यः श्राद्धे सर्व कर्मस्य निष्फलम् २८२ ।
तिर्यक्पुराड्रधरं विषं यः श्राद्ध भोजियण्यति ।
पितरस्तस्य यान्त्येव कालसूत्रं सु द्राहणम् २८३ ।
नावेष्णवान्नं सुनीत द्यान्नावेष्णवं च ।
नार्वयोदितरान्देवान्न क्कितिर्यग्यारयोत्ततः ३०७ ।

§ "तप्ते न वांग्य घनुषांकित रामभक्तः १०।

यज्ञं चं तीर्थगमनं पितृ देव सवँ, छुर्वन्ति कर्म शुभकं श्रुतयो बदन्ति । ये नांकिता धनुषरेविंफलं च सर्वं, ये चांकिता धनुः शरैश्च फलं सहस्रम् १७। तप्तं धनुः शरमिदं भुजयोः प्रकुर्यात् २१। तप्तं धनुश्शरमथोखलु तत्र होमे, प्रेम्नाकितं सु मनसा च गुकः प्रकुर्यात् । देशेषु चैब सकलेष्विप सर्वकाले, वर्णाश्रमाश्च सकलांकित पुण्य पुंजाः २५।

श्रीराम संस्कार विवर्जिता ये निष्पुच्छ शृङ्काः पशवोनरास्ते । शक्ता न वेदा श्रभिवर्णितु यत्त्वत्तोमयाख्यातमविस्तरेण २६ । इति पञ्च सर्गीय महारामायण श्रव्याय २ । यह ४९ वां महा-रामायण का सर्ग है किन्तु कांड का नाम नहीं है, श्रीसीताराम श्रेस श्रयोध्या की छपी।"

क्ष त्रिपुरब्र् ।

न कुर्यांचो विधानेन पितृ यज्ञं नराधमः। श्रज्ञाति क्रमणाद्विष्णोः पतत्योव न संशयः ३२८। इति वृद्धहारीत स्पृति धर्म्भशास्त्र श्रथ्याय ११।

"१ नोट—मनुस्पृति अध्याय ३ स्त्रोक १५२ में लिखा है कि मांस बेचने वाले को श्राद्ध में न खवावें। मनुस्पृति अध्याय ३ स्त्रोक १६४, अत्रिस्पृति स्त्रांक ३४४, उशनस्पृति अध्याय ४ स्त्रोक २९ और गौतमस्पृति अध्याय१५ अंकर में लिखा है कि हिंसक (हिंसा करने वाले-मांस खाने वाले) त्राह्मण को श्राद्ध में न खवावे। मनुस्पृति अध्याय ३ स्त्रोक १५९ उशनस्पृति अध्याय ४ श्लोक २८ और गौतमस्पृति अध्याय १५ अंक २ में लिखा है कि मद्य पीने वाले ब्राह्मण को श्राद्ध में न ले। अनेक प्रकार के ब्राह्मण श्राद्ध में न लेने योग्य यदि जानता है तो मनुस्पृति अध्याय ३ श्लोक १३६ से श्लोक १८२ तक, याझवल्क्यस्पृति अध्याय १ श्लोक २२२ से श्लोक २२४ तक, अत्रिस्पृति श्लोक ३४२ से श्लोक ३५० तक, उशनस्पृति अध्याय ४ श्लोक १९ से श्लोक ३४ तक, वृहद्यमस्पृति अध्याय ३ श्लोक३४ से श्लोक ३८ तक, और गौतमस्पृति अध्याय १५ श्रंक २ देखो।

२ इस समय श्राद्ध करने की पृथा होने के कारण मैने श्राद्ध में न लेने योग्य ब्राह्मणों का उक्त स्मृतियों (धर्मशास्त्रों) से विशेष परिचय इस बास्ते दिया है कि जिसमें श्राद्ध कर्ताश्रीर उनके पितृ पुनः देवतायों का लोक परलोक में कल्याण हो। मेरा विशेष श्राद्ध कर्तायों से श्रानुरोध है कि वे उक्त स्मृतियों में लिखे श्रानुसार श्राद्ध में ब्राह्मणों से उचित वर्ताय करेंगे। स्मृति को ही धर्मशास्त्र कहते हैं—देखो सनुस्मृति श्रध्याय २ श्लोक १०। देव श्रीर पितर कार्य में मूर्ख के खवाने के विषय में मनु श्रध्याय २ श्लोक १५०-१४८, श्रध्याय ३ श्लोक १३२ से १३३, श्रीर श्रध्याय ४ श्लोक १८८ से १९१ तक देखो।" श्राद्ध में लेने योग्य ब्राह्मण यथा:—

जर्ध्वपुराड् घरं विशं चक्राङ्कित भुजं तथा।
पूजिय ध्यति यः श्राद्धे गया श्राद्धायुतं लभेत् २८४।
शांख चक्रोध्वपुंड्रदि धारियां वैष्णवं द्विजम्। ऽ
भक्तया संपूजये धस्तु दैवे पित्रये च कर्मिण २८५।
कल्प कोटि सहस्राणि कल्प कोटि शतानि च।
प्रयान्ति पितरस्तस्य विष्णुलोकं सु निर्मलस् २८६।

, ऽ ब्राह्मणः चित्रयो वैश्यः शुद्रो नारी तथेतरः । चकाचैरङ्कयेद्गात्रमात्मी यस्याखिलस्य च ५९। इति नारदपद्धरात्र भरद्वाजसहिना ऋध्यात्र ३। ऊर्कापुरेष्ड्र के विषय में ब्रागे का ४० श्लोक देखो। उद्धिपुंड् घरं विषं तप्त चक्राङ्किता स कम् ।
श्राद्धे संपूजयेद्यस्तु गया श्राद्धायुतं लभेत् २८७ ।
तप्त चक्रेण विधिना बाहुमूलेन लाञ्छितः ।
पुनाति सकलं लोकं नारायण इवार्घाभत् २८८ ।
श्रविद्यो वा सिवद्यो वा चक्रशंखोध्वपुंड् घृत् ।
ब्राह्मणः सर्व लोकेषु पूज्यमानो हरिर्यथा २८९ ।
श्राद्धे दाने ब्रते यज्ञे + विवाहे चोपनायने ।
चक्राङ्कित विषमेव पूजयेदितरान्न तु २९४ ।

मत शरीर विशस्य शङ्ख चक्रादि लाञ्छितम्।
न संत्यज्ञति देशेशः सत्यं सत्यं वदाम्यहम् ४८।
न तेन दुर्गति गच्छेश्वकं तत्र प्रशास्ति हि।
सर्प व्याव्र विषा चौर वारि ऋग्नि विश्र्चिकाः ९६।
चक्राङ्कितस्य नेच्छन्ति दुर्गतिं यम किंकराः।
शमशाने मागधे देशे म्लेच्छ देशे ऽ न्त्यजां गयो ९७।

इति नारद्पञ्चरात्रान्तरगत ब्रहद्ब्रह्म संहिता पाद १ ऋध्याय ५।

+ पाक यज्ञादि में शुद्र को भी दान दै यथा --दान द्याचशुद्रो ऽ पि पाक यज्ञैर्यजेत च। चक्राङ्कितं सुनो विष: पङ्क्ति मध्ये तु भोजयेत्।
पुनाति सकतां पिकं गंगे चोत्तर वाहिनी २९६।
इति वृद्धहारीतस्मृति धर्मशास्त्र अध्याय ११।
शाद्ध में लेने योग्य ब्राह्मण यथाः—

पुराण वेत्ता ब्रह्मज्ञः स्वाध्यायी जव तत्वरः ८०। वह्म भक्तः पितृ परः सूर्य भक्तोथ वैष्णवः । ब्राह्मणो योग निष्ठात्मा विजितात्मा सुशीलवान् ८१ । येते तोष्याः प्रयत्नेन ८२ ।

इति पद्मपुराण सृष्टिखंड ऋध्याय ९ ।

"श्नोट-श्राद्ध में खाने योग्य ब्राह्मण यदि पूर्ण कर से जानना होतो मनुस्पृति अध्याय ३ रलोक १२८ से रलोक १४९ तक और रलोक १५३ से रलोक १८६ तक, याज्ञवल्क्य स्पृति अध्याय १ रलोक ११९ से रलोक १२१ तक, अत्रिस्पृति रलोक ३५२ से रलोक ३५५ तक, उरानस्पृति अध्याय ३ रलोक ११६ से रलोक ११७ तक और ४ अध्याय में रलोक ९ से रलोक १४ तक,

> भृत्यादि भरणार्थाय सर्वेषां च परिग्रहाः १४। इति ब्रह्मपुराण ऋष्याय ११४।

बृहत्पाराशरीयधर्मशास्त्र अध्याय ५ श्लोक १५ से श्लोक २२ तक, प्रजापितस्मृति श्लोक ०० से श्लोक ०१ तक, और लघुआश्वलायन स्मृति आद्धोपयोगी प्रकरण श्लोक १५ से श्लोक २० तक देखो। उक्त स्मृतियोंके कहे अनुसार यदि आद्ध करता, ब्राह्मणों को आद्ध में भोजन न करायगा तो आद्ध कर्त्ता की और पितरों की अच्छी तरह दुर्गित होगी, और शरीर की महनत काम का नुकसान द्रव्य का नाश हाथ लगेगा।

२ यदि श्राद्ध का फल और समय जानना हो तो मनुस्मृति श्राध्याय ३ श्लोक २०३ से श्लोक २६३ तक, याज्ञवल्क्य स्मृति श्राध्याय १ श्लोक २१० से श्लोक २१८ तक और श्लोक २६२ से श्लोक २६० तक, श्रात्रस्मृति श्लोक ३५० से श्लोक ३६२ तक, कात्यायनस्मृति खण्ड १६ श्लोक १ और १०, दत्तस्मृति श्राध्याय २ श्लोक २६, वशिष्ठस्मृति श्राध्याय ११ श्लोक ३३, और प्रजा-पतिस्मृति श्लोक १७ से ३८ तक देखो।

३ यदि श्राद्ध करने का स्थान जानना हो तो (और स्थान जानना ही चाहिये) मनुस्मृति अध्याय ३ श्लोक२०७, याज्ञवल्क्य स्मृति अध्याय १ श्लोक २६१, अत्रिस्मृति श्लोक ५६ और ५९, अश्रास्मृति अध्याय ४ श्लोक १३ से श्लोक १६ तक, शङ्कस्मृति अध्याय ४ श्लोक १० तक, लिखितहमित स्रोक १२,

बशिष्डस्मृति अध्याय ११ रलोक ३९, और प्रजापतिस्मृति रलोक ५३ और ५४ देखो ।

४ श्राद्ध में किस किस चीज का निवेध होता है यदि जानना हो तो मनुस्मृति अध्याय ३ रत्नोक २३९ से श्लोक २७२ तक, अत्रिस्मृति रत्नोक १५० से श्लोक १५४ तक, वृहद्विष्णु स्मृति अध्याय ७९ रत्नोक १ से १८ तक, कात्यायनस्मृति खरड १७ श्लोक ९ और वौधायनस्मृति प्रश्न २ अध्याय ८ रत्नोक २४ देखो ।

प श्राद्ध कर्ता का धर्म और श्राद्ध की विधि जानना हो तो मनुस्मृति अध्याय ३ श्लोक १२२ से श्लोक १२७ तक, श्लोक १८७ श्रीर १८८, श्लोक २०२ से श्लोक २३५ तक, श्लोक २४३ से श्लोक २६५ तक याज्ञवल्क्यस्मृति अध्याय १ श्लोक २१७ से श्लोक २५४ तक, अत्रिस्मृति श्लोक ३९३ और ३९४, उशनस्मृति अध्याय ३ श्लोक ११४ और ११५, श्लोक १३४ से १३६ तक, अध्याय ५ श्लोक ८१, कात्यायनस्मृति खण्ड १६ श्लोक २३, लिखितस्मृति श्लोक १७ से श्लोक २४ तक और श्लोक १७ से श्लोक २४ तक और श्लोक १० से श्लोक २४ तक और श्लोक

६ श्राद्ध में खाने वाले ब्राह्मण का धर्म जानना हो तो मनुस्मृति व्यध्याय ३ श्लोक १८८ से श्लोक १९१ तक, श्लोक २३६ से श्लोक २३८ तक, लघुहारीतस्मृति श्लोक ७५ से श्लोक ७८ तक खोर उरानस्मृति खज्याय ५ श्लोक ५ से श्लोक १० तक देखों।

७ श्राद्ध का संपूर्ण विवरण अच्छी तरह से आद्योपान्त जानना हो तो बम्बई श्रीवेंकटेरवर प्रेस का छपा "धर्मशास्त्रसंग्रह" में श्राद्ध प्रकरण १८ वां देखो। मैं इस चितदाननिषेध में श्राद्ध के विषयमें बहुत लिखता. परन्तु अन्थ बढ़ जाने के भय से कुछ थोड़ा लिख कर यही लिखता हूँ कि धर्म शास्त्रसंग्रह श्राद्ध प्रक रण देखे।।"

शास में अर्व्युराष्ट्र धारण करना आवश्यकीय है यथाः— संध्या काले अप होमें स्वाध्यामेपित तर्पणे। आदे दाने च यज्ञे च धारयेद्ध्वंपुंड्कम् १४। अर्ध्वपुण्ड्ं तु विप्राणां संध्यानुष्ठान कर्मवत्। आद्धकाले विशेषेण कर्त्ता भोक्ता च न त्यजेत् १५। अर्ध्वपुंड्ं विहीनस्तु कर्म यत्किचिदाचरेत्! तत्सर्वं निष्कलं याति इष्टापूर्विपिष द्विजाः १६। यच्छरीरं मनुष्याणामूध्यपुंड्ं विवर्जितम्। द्रष्टव्यं न हि तत्कार्यं समशान सहशं हि तत् १७।ऽ

ऽ पद्मपुराण प्रतालखंड ऋत्क्षय ७९ स्लोक २३-२४ देखो।

श्र शिक्ष प्रश्वेष प्रमुख्य प

'वैष्णवीं का जूठन खाने से करोड़ों जन्मों के पाप नाश हो जाते हैं यथाः—

> कोटि जन्मार्जितं पापं ज्ञानतो ऽ ज्ञानतोपि वा । सद्यः प्रणाश्यते मृणां वैष्णवोच्छिष्ट मोजनात् १३।

> > इति पाराशंशेय धर्मशास्त्र उत्तरखंड श्रध्याय १०।"

अर्ध्वपुरड् तिलक को अच्छी तरह से सुधार के ख़्बस्रती के साथ लगावे यथाः—

सान्तरानां मक्वीत पुंड्रं हरि पादा कृतम्। श्राद्यकाले विशेषेण कर्ता भोक्ता च धारयेत् ६८।

इति वृद्धहारीतस्मति धर्भाशास्त्र श्रध्याय ८।

उच्चेपुराड् को ऊँच नीच स्त्री आदि सबको लगाने का अधिकार है यथाः—

स्त्रियो चैश्यास्तथा श्रुद्रा म्लेच्छा वा ऽ न्त्यज जातयः। ऊर्ध्वपुंड्र घराः सर्वे नमस्या देवता इव ५७। × इति नारद पंचरात्रान्तरगत वृहद्ब्ब्ह्य संहिता पाद १ स्त्रध्याय१३।

यज्ञो दानं तपो होमः स्वाध्यायः पितृ तर्पणम् । वृथा भवति तत्सर्वमृध्वपुंड्ं विना कृतम् ४३ । इति नारदीयपुराण पूर्वखंड अध्याय २६ ।

"नोट-परन्तु जो ऋतिथि बिना सन्मान पाये गृहस्थ के यहां

× चक्रायुघ धारण के विषय में १०२ पृष्ठ की २८५ खोक की विषय में १०२ पृष्ठ की २८५ खोक की

से लौट जाता है वह अपना पाप देजाता है और उसका पुग्य ले जाता है यथा:—

> श्रातिथिर्यस्य भग्नाशो गृहात्यति निवर्त्तते । स दत्वा दुष्कृतं तस्मै पुरुयमादाय गच्छति ३६ । इति झहापुराण श्रध्याय ११४ ।

"नारदीयपुराण पूर्वभाग अध्याय २७ स्रोक ७२, विष्णुपुराण अंश ३ अध्याय ११ स्रोक ६८ श्रीर मनुस्मृति अध्याय ३ स्रोक ९९-१०० में भी ऐसा ही है।"

जो श्रतिथि श्रभ्यागत को गृहस्य कोध दृष्टि से देखते हैं तो नर्क में उनके नेत्रों को जिनके वज्र कैसे मुंह हैं ऐसे गीध कंक काक वटेरादि वल से उखाड़ते हैं यथाः—

यस्त्विह वा अतिथीनभ्यागतान् वा गृहपतिरसकृदुपगत-मन्युर्दिधच्चटिव पापेन चचुषा निरीचेतस्या वा ऽ पि निरये पाप दृष्टे रिचिणी वज्रतुंडा गृधाः संक काक वटाद्यः प्रसद्गोक्वला-दुत्यपाटयंति २५ इति भागवतस्कन्ध ५ अध्याय २६।

धर्म की मूर्ति जिसे कहते हैं वो अतिथि ही हैं यथा: — धर्मस्यात्मा ऽ तिथि: स्वयम् ३० इति भागवत स्कंध ६ अध्याय ७। जिस घर से निराश होकर अक्षिण चला जाता है उसके यहां पितर १५ वर्ष तक नहीं खाते। जिसके गृह से ऋतिथि नि राश होकर लौट जाते हैं हजार बोक्त लकड़ी और सौ घड़े घी से होस करने पर भी उसका होस वृथा हो जाता है यथाः —

> श्चितिथिर्यस्य भग्नाशो ग्रहात्प्रति निवर्तते। पितरस्तस्य नाश्नंति दश वर्षाणि पञ्च च ४५। काष्ठभार सहस्रेण घृतकुंभ शतेन च। श्चितिथिर्यस्यभग्नाशस्तस्य होमो निरर्थकः ४६।

> > इति पाराशर स्मृति अध्याय १।

जिसको धन, यश, ऋायु और स्वर्गलोक चाहने की इच्छा हो वो ऋतिथि का सत्कार करें और उसके खवाये विना आप न खाय यथाः—

> न वै स्वयं तदश्रीयाद्तिथि यत्र भोजयेत्। धन्यं यशस्यमायुष्यं स्वर्ग्यं वातिथि पूजनम् १०६।

> > इति मनुस्मृति ऋध्याय ३।

अतिथि की अनेक बातों के विषय में देखो, हारीतस्मृति अध्याय ४ श्लोक ५० से ५९ तक। राङ्कस्मृति अध्याय ५ श्लोक ७ व १३। पाराशरूस्मृति अध्याय १ श्लोक ४० से ६२ तक और श्लोक १०३-१०४। वशिष्ठस्मृति अध्याय ८ श्लोक ७-८। व्यास-

समृति अभ्याब ३ ऋोक ३८। शातातपस्मृति ऋोक ५५। याज्ञव-ल्क्यम्मृति ऋभ्याय १ ऋोक १०७-१०८-१११। मनुस्मृति ऋध्याय ३ क्लोक १५ से १२१ तक ।, हारीतस्मृति अध्याय ४ स्लोक ५६ में लिखा है कि जितने समय में गौ दुही जाती है गृहस्थ उतने समय तक अतिथि की बाट देखे, पहिले के बिना देखे हुए तथा बिना जाने हुए अतिथि के श्राने पर उसका सतकार करे।, उशनस्मृति श्रध्याय १ स्रोक ४० में लिखा है कि द्विजातियों का गुरु श्रम्न, सब वर्णी का गुरु ब्राह्मण, पत्नी का गुरु स्वामी श्रीर सब मनुष्यों का गुरु अभ्यागत है, शंखस्मृति अध्याय ५ स्रोक ७ भी इसी तरह का है।, मनुस्मृति श्रध्याय ३ ऋोक ७२ में लिखा है कि जो गृहस्थ अत्रादि से देवता अतिथि सेवक आदि भृत्य पिता साता आदि गुरुजन और अपनी आत्मा इन पांचों को संतुष्ट नहीं करता वह जीता हुआ भी मुदें के समान है।, मनुस्मृति अध्याय ३ ऋोक ११४ में लिखा है कि नवीन विवाही हुई पतोहू (बहू) तथा पुत्री, बालक, रोगी और गर्भवती स्त्री को बिना विचार किए हुए अतिथि से पहिले खिलावै।, अतिथि किसे कहते हैं सो आगे दे-स्तिये। मनुस्मृति अध्याय ३ श्लोक १०२ में तिला है कि केवल एक रात अन्य के घर में बसनेवाले ब्राह्मण को अतिथि कहते हैं। पाराशरस्मृति अध्याय १ ऋोक ४२ में लिखा है कि जो ब्राह्मण 🗫 ही गांव में बसनेवाला है उसको ऋतिथि समक्त कर ग्रहण न

करें जिसकी अनित्य स्थिति है वही अतिथि कहलाता है। मनुस्मृति अध्याय ३ स्त्रोक ११० में लिखा है कि ब्राह्मण के घर में
आये हुये चत्री, वैश्य, शूद्र, मित्र, स्वजन और गुरु अतिथि नहीं
कहें जाते।, पाराशरस्मृति अध्याय १ खोक ४०-४१-६२ में लिखा
है कि मित्र हो अथवा शत्रु हो मूर्ख हो अथवा पंडित हो जो वैश्वदेव
के अन्त में आवै वह अतिथि स्वर्ग में पहुंचानेवाला है ४०। जो
दूर से आया हो, थका हो और वैश्वदेव के समय उपस्थित हो
असको अतिथि जानना, पहिले आये हुये को नहीं ४१। चोर हो
अथवा चारडाल हो या पितृशतक शत्रु होवै,यदि वैश्यदेवके समय
आया हो तो वह अतिथि स्वर्ग में ले जानेवाला है ६२। शातावपस्मृति का ४२ श्लोक उक्त ४० श्लोक के समान है।"

श्राद्ध काल में भगवत को भोग लगाकर पितृ की दे यथाः— यः श्राद्ध काले हरिश्च ग्रुक्त शेषं। ददाति भक्तया पितृ देवतानाम्।

नास्ति विष्णु समं दैवं ५७।
 इति वृहन्नारदीय पुराण पूर्वखण्ड श्रध्याय ६।
 तत्वं शुरुसमंनास्ति न देवः केशवात्परः ९।
 इति नारदीयपुराण पूर्वखण्ड अध्याय ३४।

ने नैव विग्रहास्तु तुलसी वि मिश्रा। नाकरवकोटि पितरः सु तृप्ताः।

इति शब्दकल्पट्टुम श्राद्ध शब्दान्तर्गत ।

विष्णु का भोग लगा श्रम्न पितरों को दे। जो विष्णु को विना भोग लगाये देवताश्रों को समर्पण करता है वह मांस मदा सदृश होजाता है, इससे श्रम्न जल फल फूल भेवा श्रादि विष्णुकी भीग लगाकर पितृदेवतावों को समर्पण करें यथाः—

हिहि अक्तोज्भितं दद्यात् पितृ गां च दिवी कसाम्। तदेव जहुयाद्वहों अञ्जोयात्त् तदेव हि ७२। हरेरनर्षितं यत्तु देवानामर्षितं च यत्। मद्यमांस समं प्रोक्तं तद्गुञ्जोयात्कदाचन ७३।

नास्तिवेदात्परं शास्त्रं न हि कृष्णात्परः सुरः ७२। इति ब्रह्मवैवर्तपुराण गणपति खण्ड ऋध्याय ४४। सत्यं विच्महितेविच्म सारंविच्म पुनः पुनः। ऋसारेस्मिस्तु संसारे सत्यं हिर समर्चनम् १०। इति वृह्मारदीयपुराण पूर्वखण्ड ऋध्याय ३४। हरेः पाद जलं पारयं नित्यं नान्यदिवीकसाम् । सुराणामितरेषां तु फल पुष्प जलादिकम् ७४ ।

इति वृद्धहारीतस्वृति धर्मशास्त्र ऋध्याय = ।

नोट -मांस मद्य भन्नी इस बात पर ध्यान दें कि किसी कारण से दूषित अन्न को अति लघुता में मांस मद्य की पंक्ति में नियोजित किया है. तो मद्य मांस जीच ही वस्तु है।

तथा—
हर्यर्षितं तु यचान्नं तीर्थं + वा पितृ कर्मणि।
दयात्वितृ णां यद्गक्ष्यं गया श्राद्धायुतं लभेत् ३२०।
हरेनिवेदितं अत्तया यो दयाच्छाद्ध कर्मणि।
पितरस्तस्य यान्त्येव तद्विष्णोः परमं पदम् ३२१।
तीर्थं वा तुलसो पत्रं यो दयात्पितृ देवतम्।
श्राकलप कोटि पितरः परितृप्ता न संश्यः ३२२।
यः श्राद्ध काले मूढ़ात्मा पितृ णां च दिवौकसाम्।
न ददाति हरेर्भुक्तं तस्य वै नारकी गतिः ३२३।
इति बृद्ध हारीत स्मृति धर्मशास्त्र श्रध्याय ११।

⁺ भगवत चरणामृत।

शाद में लेने योग्य फल यथा:-

आम्रमाम्रातकं विरुवं दाडिवं वीजपुरकम। पाचीनामलकं क्षीरं नारिकेलं परूपकम ८९। बत्सकं च स खर्जुरं दाक्षानील कंपित्थकम । पाटोतां च त्रियातांच कर्कन्धू वदराणि च ९०। वैकंकतश्च नारिंगं वीजपम्रथापि वा । एतानि फला जातानि श्राद्धे देयानि यत्नतः ९१। इति ब्रह्मपुराग् अध्याय ११२।

निष्फल दान यथाः— नक्षत्र सूचकस्यापि दत्तं भवति निष्फलम ५ । हिंस्यकस्य खलस्य च ७। वेद विक्रियिणिश्वापि स्मृति विक्रियिणिस्तथा। धर्म विक्रिविणे विप दत्तं भवति निष्फलम ८।

नास्ति वेदात्परं शास्त्रं नास्ति मातुः परो गुरुः। नास्ति दानात्परं मित्रमिह लोके परत्र च।

इति श्रित्रिस्मृति श्लोक १४८।

श्रमी जीवी मसी जीवी देवलो ग्राम याजकः । धावको या भवेलेषां दत्तं भवति निष्फलम् १०। मद्य मांसाशिनश्रापि स्त्री विट्स्याति लोभिनः । चौरस्य पिशुनस्यापि दत्तं भवति निष्फलम् १७। दंभेन चापि हिंसार्थं परस्याविधिनापि च २१। इति वृहस्रारदीयपुरास पूर्वलण्ड श्रध्याय १२।

विधि से हीन तथा कुपात्र को दान देने से केवल उस दान का फल ही नहीं व्यर्थ होता है किंतु उस दाता के पहिलेके पुरायभी नाश हो जाते हैं यथाः—

> निधि होने यथा ८ पात्रे यो ददाति प्रतिग्रहम् २७ ! न केवलां हि तद्वचर्यं शेषमन्यत्र नश्यति २८ । इति दत्त्रस्मृति व्यध्याय ३ ।

"विद्या और तप से हीन ब्राह्मण दान न लेवे क्यों कि दान लेने से वह दाता के सहित नरक में जायगा ऐसा याज्ञवल्क्यरमृहि अध्याय १ रलोक २०२ में लिखा है। अत्रिस्मृति रलोक २३ और विशिष्ठस्मृति अध्याय ३ रलोक १३ में लिखा है कि जिस देश में विद्यानोंके भोगने योग्य वस्तुको मूखे भोगते हैं उस देशमें अनावृष्टि होती है अथवा कोई बड़ा भय उपस्थित होता है। लघुरास्क्स्मृहि

श्लोक २३ में लिखा है कि जिन ब्राह्मणों के उदर में वेदोंके पवित्र मंत्र हैं वही ब्राह्मण पूजने योग्य हैं केवल ब्राह्मणका शरीर धारण करनेताले नहीं। पाराशरस्मृति अध्याय ८ श्लोक ३२ में लिखा है कि गायत्री से हीन ब्राह्मण शूद्र से भी अधिक अशुद्ध है, गायत्री अपेर बेद के तत्व को जानने वाले ब्राह्मण को सवलोग पूजते हैं। वृहत्पाराशरीय धर्मशास्त्र अध्याय २-जपविधि-श्लोक १३ में लिखा है कि जो बाह्यण गायत्री नहीं जानता अथवा जान कर के भी उसकी उपासना नहीं करता वह शूद्र है। दल्रस्मृति श्रध्याय २ श्लोक २१ और २२ में लिखा है कि जो बाह्य विशेष करके मं-भ्योपासना नहीं करता वह जीवित श्रवस्था में ही शूद्र होजाता है श्रीर मरने पर कुत्ता होता है २१। सन्ध्या से हीन बाह्यण सदा अपवित्र रहता है और सब कर्मी के अयोग्य है उसके सब किये हुये कर्म निष्फल होते हैं २२। विशेष जानना हो तो मेरा बनाया "दानादरी" अन्थ देखो। "

न अवेंद्रण्य को छुएन उसका कचा पका अन्न खाय यथाः—

श्चविष्णवानामपि च संसर्गे दूरतस्त्यजेत्। पक्कवाद्यं यथापकं वाग्यतो नियतेन्द्रियः १३६।

इति वृद्ध हारीत स्मृति धर्मशास्त्र अध्याय ११।

नोट-भांस खानेवाले का अझ न खाय-देखो मनुस्मृति अध्याय ५ श्लोक २१३ और याज्ञवल्क्यस्मृति अध्याय १ श्लोक १६०। जो पशु को लाठी भारे उसका भी अझ न खाय-देखो विशिष्ठस्मृति अध्याय १४ के शुरू में।

अवैष्णवानां संलाप वंदनादान्विवर्जयेत ८३। ×

इति नारदपञ्चरात्रान्तर्गत गृहद्त्रह्मसंहिता पाद २ अध्याय ५।

हम यहां पर किंचित यह दिखाते हैं कि गोमेध, अरवमे-धादि शब्दों के क्या अर्थ होते है यथा:-

शतपथत्राह्मण वेद के कांड १३ श्राच्याय १ त्राह्मण ६ वाक् ३ में तिखा है कि--

राष्ट्रं वा श्रश्वमेघः ।

× हीन वर्णे च यः कुर्यादज्ञानाभिवादनम् ३११ । तत्र स्नानं प्रकुर्वीत घृतं प्रश्य विद्युद्धयित । समुतपन्ने यदास्नाने भुंजे वापि पिवेद्यदि ३१२ इति अत्रिस्मृति । अर्थ-जो मनुष्य अज्ञानवश होकर अपने से हीन वर्णे को नमस्कार करता है वह स्नान करके भी चाटने पर शुद्ध होता है ३११ । ३१२ ।

श्रीर शतपथत्राह्मण वेद के कांड ४ श्रध्याय ३ जाह्मण ४ बाक् २५ में लिखा है कि--

अन ^{१३} हि गौः ।

नोट — ब्राह्मण १ वाक् २५ भी देखो । इसी शतपथ में लिखा है कि-

श्रिग्निर्वा श्रश्यः, श्राज्यं मेथः।

इन उक्त बचनों का अभिप्राय यह है कि न्यायपूर्वक राज्य करना अश्वमेथ है। घी तथा सुगंधित वस्तुओं का अग्नि में होम करना अश्वमेध है। विद्या आदि का दान देना अश्वमेध है। अस्र इन्द्रियां और पृथिवी आदि को पवित्र रखना, सूर्व की किरणों से उपयोग लेना गोमेध % है। जब सनुष्य मरजाय तब इसके शरीर को विधिपूर्वक दाह करना ही नरमें है।

गाय का नाम वेद में अध्न्यया है (पृष्ठ ४१ मंत्र १४) याने नहीं मारने योग्य, (महाभारत शांतिपर्व मोत्तधर्म अध्याय ८५ श्लोक ४० से ४९ तक भी देखो), इस वास्ते यहाँ पर गो शब्द का अर्थ अन्न इन्द्रियाँ आदि यही होगा और मेध (यज्ञ) शब्द का अर्थ पृष्ठ१०-११में देखो।

अतः बैदिक साहित्य से भी इसी प्रकार के अर्थ होते हैं, जैसे उगादि कोष पाद १ सृत्र १५१ की व्याख्या में लिखा है कि-

श्रव्यात व्यापनोतीत्यश्वः । तुरङ्गो वहिवी । श्रयीत् श्रश्य का श्रर्थं श्रग्नि भी होता है। नोट -बाज माने श्रन्न, इति वेदांग नैघंटु २।७।

त्रीर वेदांग नेघंटु ऋध्याय ३ खंड १७ में मेघ का ऋर्थ यज्ञ लिखा है।

जगादिकोव पाद २ सूत्र ६० की व्याख्या में लिखा है कि

गच्छित यो यत्र यया वा स गौ: । पशुरिन्द्रियं सुखं किरणेविज्ञं चन्द्रमा भूमिर्वाणी जलं वा ।

श्रर्थात् इन्द्रिय, सुख किरणादि गौ के श्रर्थ होते हैं।

वेदांग नैघंदु ऋध्याय १ खंड १४ में नर का ऋर्थ श्रश्व होता है और ऋश्व का ऋर्थ ऋग्नि होता है।

श्रव गोमेध अश्वमेध नरमेधादि शब्दों के यही अर्थ निकले कि अन्न जल इन्द्रियें पृथिवी आदि को पवित्र रखना और सूर्य की किरणों से उपयोग लेना गोमेध है। घी तथा सुगंधित वस्तुओं का श्रान्त में हवन करना त्राश्वमेध और नरमेध है।

१ नोट—तर्पण करना पितृ यज्ञ है, हवन करना देव यज्ञ है, पढ़ना ब्रह्म यज्ञ है, इति मनुस्मृति अध्याय ३ स्रोक ७० और कात्यायनस्मृति खंड १३ स्रोक ३। गोमेध अर्थान यज्ञ में गौ मारने का खंडन देखिये महाभारत शांतिपर्व मोज्ञधर्म अध्याय ९२ स्रोक १ से ३ तक।

२ नोट — वेदों में मांस भन्नणादि अखाद्य कुवस्तुयों का जो नाम निकलता है, इसका कारण यह है कि वाममर्गी पाय-डियों ने वेद मार्ग को प्रलीन कर दिया "वेदमार्ग प्रलीनंच पाखरडाड्ये ततोजने ३९ इति ब्रह्मपुराण अध्याय १२२ " पृष्ठ ९२ रलोक १७ और पृष्ठ ९३ रलोक १८ और नोट देखों । विशेष जानना हो तो "हिंसातकीवली " प्रश्न २६ का नोट देखों।

> वेद धर्म मुक्ति नहीं दे सकता यथाः— संदेहो वर्तते राजन्ननिवर्तति मे कचित्। भवता कथितं यत्तच्छणवतो मे नराधिप ४८। ऽ

S स्वर्ग की प्राप्ति अनित्य है, इसे लघु और अग्यानी लोग चाहते हैं।

वेद घर्षेषु हिंसास्याद्धमं बहुताहिसा ।
कथं मुक्ति घदो धर्मो वेदोक्तोबत् भूपते ४९ ।
मत्यक्षेण त्वनाचारः सोमपानं नराधिप ।
पश्र्नां हिंसनं तद्बद्वक्षणं चामिषस्य च ५० ।
सोत्रामणौ तथा प्रोक्तः प्रत्यक्षेण सुरा ग्रहः ।
द्युतकीड़ा तथा प्रोक्ता व्रतानि विविधानि च ५१ ।

इति देवीभागवत स्कंघ १ अध्याय १८ । सकाम कर्म यज्ञ अग्निहोत्रादि करनेवाले नरकको जातेहैं यथा :-

श्रमुर्ग्या नाम ते लोका ऽ अन्धेन तमसा द्वता ÷।

। ।

साँस्तेष्पेत्यापि गच्छन्ति येके चा त्वामहतो जना (-३।

श्रम्यन्तम इ. प्यविशन्ति ये विद्याग्रुपासते ।

सतो भूग ऽ इवते समोप ऽ उव्विहचायाः ा राज्येत अध्याय ४०।

नोट यही १२ वीं श्रुति बृहदारएयकोपनिषद् अध्याय ४ बाह्मग्र४ मंत्र १० में है। जोसकाम कर्म के करने वाले हैं वे मूर्ख स्वर्ग भोग कर फिर सनुष्य लोक को पाकर पशु योनि नरकादि! हीन लोक को प्राप्त होते हैं यथा:—

इष्टापूर्तं मन्यमानावन् ष्टंनान्यच्छ्येयो वेदयन्ते प्रमृदाः । नाकस्य पृष्ठे ते सुक्रतेतु भूत्वेमं लोकं द्दीनतरश्चा विशन्ति १०। इति सुरुडकोपिषद् मुंडक १ खंड २।

•

स्नानदान यजनादिकाः क्रियामोचनाविध दृथैवतिष्ठते ७४। सिलाले सैन्यवं यद्वत्साम्यं भवति योगतः । तथात्म मनसोरैक्यं समाधिरिति कथ्यते ७५ । इति वाराहोपनिषद् अध्याय २।

अज्ञानान्ध तमोरूपं कर्म धर्मादि लक्षणम् १२। इति बाराहोपनिषद् अध्याय २।

सकाम कर्म करने वाले जो संसार को चाहते हैं सो यह संसार असार है जीव इसमें सुखकी आशा न करें एक हरि का ही स्मरण सार है यथाः—

श्रसार भूते संसारे सारमेकं विनिर्दिशेत्। श्रसारा शेष लोकस्य सारमाराधनं हरे १।×

इति गरुड़पुरागा पूर्वस्वंड अध्याय २३३।

नोट-कलियुग में हरि के नाम सिवाय जीवों के तरने का अन्य उपाय नहीं है-देखो पृष्ठ २९ श्लोक ८६ की टिप्पणी।

प्रवल इन्द्रियों के तंत्र होकर जीव जानते हुए भी पुनः आत्म ज्ञान होते हुए कर्मका कर्ता स्वयं वन जाता है, वह आत्मा जानते हुए भी विमृद् हो जाती है यथाः—

× श्रन्यान देवों के उपासक होने पर तथा उन का मंत्र (दीचा) लेने पर हिर मंत्र ले सकते हैं यथा:—

श्रवैष्णवोपदिष्टंचेत् पूर्व मन्त्रं परित्यजेत् । पुनश्च विधिनासम्यगवैष्णवाद्याद्यन्मनुम् । •

इति राममन्त्रपरमवैदिकान्तरगत पद्मपुराण उत्तरखंड श्रन्थाय २२६ का वचन । दुर्लभा वैष्णवी दीचा ४० इति नारदीय पुराण उत्तरभाग अध्याय ३३ । भक्रते: क्रियमाणानि गुर्गोः कर्माणि सर्वशः । श्रदङ्कार विमृद्दातमा कर्ताद्दमिति मन्यते २७। इति गीता श्रध्याय ३।

नोट -महाभारत के भीष्मपर्व में २३ द्याध्याय से ४१ तक की गीता कहते हैं।

जिस कमें का फल थोड़ा है उसे दूर से त्याग दे यथा:-

इहामुत्र फलं लब्ध्या सुखं शुक्तवा पुनः पतेत्। तस्मादनित्यमखिलं दूरतः परिवर्णयेत् २२।

इति श्राद्पुराण श्रध्याय ८।

नोट-जो कर्म विधिपूर्वक नहीं किया जाता तो उससे स्वर्ग नष्ट होता है-देखो मुंडकोपनिषद् मुंडक १ खंड २ श्रुंति ३।

गृहस्थ गुरु नहीं तारसक्ता क्योंकि वह आप ही विडंबना में पड़ा है तब दूसरे को क्या छुड़ायगा यथाः—

रोग ग्रस्तो यथा वैद्या पर रोग चिकित्सकः। तथा गुरुर्मु मुक्षोर्मे गृहस्थो ऽयं विद्यवना ४४।

इति देवीभागवत स्कन्ध १ अध्याय १४।

कलियुग में धर्म के जानने वाले भी अधर्म करते हैं यथाः—

पहाँतो ऽपि च धर्मज्ञा श्रधर्म छुर्वते नृप ५३।× इति देवीभागवत रुकंध ६ श्रध्याय ११।

श्रौर कलियुग में पंडित पाखरडी होते हैं यथा:—

पंडिताः सोदरार्थं वै पाखंडानि पृथक् पृथक् । भवर्तयंति किता मेरिता मंद्र चेतसः ४३ । इति देवीभागवत स्कन्ध १ श्रध्याय ८ ।

श्चर्य कायी प्रशस्ती हो सर्वेषां संयती प्रियो । वर्मायमेति वान्वादो देमो ऽ यं महतामणि १०। इति देवीभागवत स्कन्व ६ अप्याय ७।

नोट—श्रविद्या के मध्य विषे वर्तते हुये मूंड्जन अपने को भीर परिंडत मानने वाले अनेक कुटिल भेष को धारण करते हुए

मास्त्री काक उल्लेक वक दादुर से अये लोग।
मले ते शुक पिक मोर से कोउ न प्रेम पथ योग १।
हृदय कपट वर बेष घर बचन कहें गढ़ छोल।
श्रव के लोग मयूर ज्यों क्यों मिलिये मन खोल २।
भले बुरे से लगत हैं बुरे भले से लोग।
"नागर" नहिं चीन्हे परें मेरे मन यह सोग ३।

समते रहते हैं-जैसे अन्या पुरुष अन्या करके ही लेगया हुना भूमता है तैसे, देखो कठवल्कीउपनिषद् अध्याय १ बत्की २ श्रृति ५। जो बुध होगा वह भोगोंमें कभी नहीं रमेगा (गीता पार्र-२३) शैवमत तामसी मार्ग है यथाः—

बद्र उवाच-

कतो मत्कृत मार्गेण बहुरूपेण तामसै: २५ । इति वाराह पुराण व्यव्याय ५० । श्रोर शिव श्राप ही प्रेत रूप श्मशान में रहते हैं यथाः—

रमज्ञान वासिनो नित्यं भेत रूपाय वै नमः ७९।

इति ब्रह्मारङपुराख पूर्वभाग ऋतुवंगपाद अध्याय २० ।

शंकरजी तपोधन दाता बेदों के पारन होते हुए भी न्लेच्छ सरीखे रहते हैं ऋत्थि (हड्डी) भस्म की बारण किये हैं इसी से इनको न्लेच्छ (भूतादि) ऋच्छे लगते हैं यथाः—

त्रपोधनं मित दान्तं स्तैच्छ वद्धेद पारगस् । तस्मात् स्तोच्छ मियो सृयात् शंकर रचास्थि अस्मधृत् ।

इति शब्द्कलपदुम शङ्कर शब्दोन्तरगत कालिकापुराण अध्याय ८३ का वचन । विध्यु बद्धा से कहते हैं कि तुमसे राजसी हम में सात्वकी और शिह में तामसी शक्ति है-अभिशय यह है कि शिव तामसी हैं यथा:—

जगत् समनते शक्तिस्वियि तिष्ठति राजसी।
सात्वकी मिय रुद्रे च तामसी परिकोर्तिताः ४७।
इति देवीभागवत एकंथ १ अप्याय ४।

राजसो ब्रह्मा सारिवको विष्णुक्तावसो रुद्र इति येते वयोगुण युक्ता, इति योगचूड्रायरपुपनिषत् श्रुति७२। बोट-पद्मोत्तरखंड ब्रम्याय १३२ श्लोक ८० भी देखो ।

विष्णु को छोड़ अन्य देवता के पूजने वाले पाखरडी होते हैं यथा:—

वे अर्चयन्ति सुरांनन्यां इत्वां विना पुरुषोत्तय । तेपाखंडत्वमापनाः सर्वतोक्तनिताः ५८ । इति पद्योत्तरसम्बद्ध अन्याय २५५ ।

शैव शाक नाज्यडी होते हैं यथाः—
पाखपट शैद शाकादि तंत्राचीकोकनादिकस्।
स्वतो त्रक शिवादिनां प्रद्धानामर्चनादिकस् ९३।
इति नारदपंचरात्र सरहाजसंहिता अध्याय १।

शिव के बनाये अन्थ तामसी हैं इन्हें कभी न माने पथा:-

तथा रुद्रेण कथितं मोहनं शुद्रकागदम्। तन्त्रं बहु विसद्ध्य तामसं परिवर्णयेत् २३ ।

इति नाग्द्पंचरात्र भरहाजसंहिता धाप्याय ४ ।

शिव काली गरोश कूटमांड भैरव भूतादि तामसी होते हैं यथा:-

रुद्र: काली गर्धेशश्च कृष्याग्रहा भैग्बादयः। । भग्न मांसाशिनश्चान्ये तामसाः परिकीर्तिताः २६८ ।

इति वृद्ध हारीत स्मृति अध्याय ११।

नोट—जब शिव तामसी हैं तो दुर्गा उनकी शक्ति (बल) है वह तामसी होनाही चाहिये। देवीभागवत रुकंध १ वह तामसी होनाही चाहिये। देवीभागवत रुकंध १ व्याच्याय २ ऋगंक २० में लिखा है कि महाल्हमी सात्विकी सरस्वती राजसी और काली तामसी है। व्याच्याय ८ श्लोक ३५-३६ में लिखा है कि विष्युकी शक्ति सात्वकी, ब्रह्मा की शक्ति राजसी और शिव की शक्ति तामसी है।

[ो] शिव गण विशेष । ‡ शिव गण विशेष।

शक्षराचस वेताल भूत भैरवादि गणों की पूजा का निवेध है अथाः—

त्रसराक्षसं वेताल यज्ञ सूतार्जनं तृष्णास्।
कुम्भोपाकपदाचोरं नरकं माप्ति साधनस् ९६।
कोटिनम्म कृतं पुष्यं यज्ञदान क्रियादिकस्।
सद्यः सर्वत्यं यांति यज्ञ सृतादि पृजनात् ९७।
स्तियो या पृष्यो वाणि यज्ञ श्रुतादिकार्चनात्।
करनकोटि लहस्राणि करप कोटि शतानिच ९८।
किमिर्मृत्वाय विष्ठायां पितृ भिः सह यञ्जाति ९९।
यज्ञराक्षस भूताश्च कृष्मांड गण भैरवाः।
नार्चनीयाः सदा देवि स्वर्गलोकमभीष्मुभिः ११७।
इति पद्योत्तरस्यक ष्राध्याय २५३।

नोट— शैषधर्म निषेघ विशेष रूप में जानना हो दो हिंसा-तर्कावलीयन्थ देखो । मेतानभूतगणांध्यान्येयजन्तेतासभाजनाः। इति गीता १७। ४।

सिय निर्माल्य निवेष यथाः—

महादेव का भोग लगा (नैबेख) खानेयाजा नवक हा जाता है यथा:- श्रग्राह्मं शिव नैवेद्यं पत्रं पुष्पं फलेजलम् १९ । इति शिवपुराण विद्येश्वरसंहिता अध्याय २२ ।

सक्तदेव हि योश्नाति ब्राह्मणो ज्ञान दुर्वतः । निर्मान्यं शंकरादिनां स चांडातो भवेद्ग्युवस् ९९ । कल्प कोटि सहस्राणि पच्यते नरकाण्निना । निर्माल्यं भो द्वित श्रेष्ठ रुद्रादीनां दिवोकसाम १०० । इति पद्योत्तरखण्ड अध्याय २५५ ।

द्रव्यमनं फलंतोयं शिवस्यं न स्पृत्रेत्किन्तः । निर्माल्यं नेव लङ्कोत कृषं सर्वे विनिःक्षिपेत् । इति स्वधमीमृतसिंधु तरंग १७ पृष्ठ २४१।

नोट—शिव निर्माल्य के विषय में ब्रह्मवैवर्त्तपुराण शक्ति खण्ड अध्वाय ३० श्लोक १६८ और शिवसंहिता भव्यो त्तरखण्ड उमा महेश्वर संबाद श्रीरामार्चीमाहात्स्य विम-दोपाल्यान अध्याय ६ देखाँ।

देवी को भोग लगाके खाने का निषेध है यथाः— नोच्छिष्टं चिएडकान्नं च सामिषं दृपला इतस् ४९।

इति भागवत स्कध ६ अध्याय १८।

श्रर्थ—चंडिका (देवी) का जूठा श्रम्न न खाय, मांस खाने वाले शूद्र का लाया न खाय ४९। ×

चकाङ्कित अगवद्भक्त अन्य देवता देवी को नमस्कार न करें यथाः—

× पाराशरस्य विषयाय ११ स्होक १६, पद्मपुराण बह्मस्यस्ट श्राच्याय १९ श्लोक ११ से १३ तक और पद्मपुराण उत्तरस्यस्ट श्राच्याय १९ श्लोक ६० देखो। भगवत के उच्छिष्ट के सिवाय श्राच्याय ६४ श्लोक ६० देखो। भगवत के उच्छिष्ट के सिवाय श्राच्याय ६४ श्लोक ६० देखो। भगवत के उच्छिष्ट मिवामेन्थं भोजनं तामसं श्रियम् गीता१०। १०) मनुस्मृति श्राच्याय २ श्लोक ६६ भी देखो। विष्णु को छोड़ ब्रह्मा शिवादि देवता जीव हैं, देवी माया है। महर्षि किपलदेव प्रणीत "कापिलस्त्र" में लिखा है कि "पुरुषः ४" श्राच्यांत पुरुष (ब्रह्म) एक है। या देवी सर्व भूतेषु विष्णु मायेति शब्दिता। नमस्तस्य नमन्तस्य नमो नमः १२ इति पार्करखेय पुराण् श्राच्याय ८२। शक्ति चिह्नान्महामाया तस्यांशाच्छारहाद्यः। तस्याएव समुद्भूतो विश्वो माया प्रतिष्ठितः २१। इति पंचसर्गीय महासायण सर्ग १।

नान्यं देवं नमस्कुर्याचान्यं देवं निरीक्षयेत्। चक्राङ्कितः सदा तिष्ठेन्मद्रकः पांडु नन्दन। अक्ष इति स्वधमीमृतसिंघु तरंग १७१

क्ष इात स्वधमान्यासतु परा एक तामसी नरक को जाते हैं श्रीर जब संसार में पैदा होते हैं

नो त्रियक् योनियों में जाते हैं यथाः—

तथा पत्नीनस्तमिस मृद् योनिषु जायते १५।
कथ्वै गच्छन्ति सत्वस्था मध्ये तिष्ठति राजसा।
जयन्य गुण द्वितस्था अघो गच्छन्ति तामसाः १८।
इति गीता अध्याम १४।

तामसा निरय यांति ।

इति ब्रह्मपुराण अध्याय १३३ श्लोक ४६ ।

तिर्यक्तवंतामसा निर्यं ४०।

इति मनुस्मृति खड्याय १२।

नोट-कूर्मपुराण पूर्वाई अध्याय २ रत्नोक ४ ६ - ५७ महा-भारत आश्वमेधिक पर्व अध्याय ३९ रत्नोक १० में भी ऐसा ही है

क्ष स्वधर्मामृत सिंधु के मिलने का पता — विद्वदर श्रीमाम् मधान्त, पं० श्री अजमूबग्र शर्गा देवज्, मु० पो० ऊखड़ा, जिला वर्षनाम (वक्कास्त्र)। १८। विस्तारपूर्वक तामसगुण. राजसगुण, सात्वकगुण के स्वरूप को जानना हो तो मनुस्मृति श्रम्याय १२ रलोक ३९ से रलोक ५१ तक देखो । याज्ञवलक्यस्मृति श्रम्याय ३ रलोक १३९ में लिखाहै कि तमोगुणी वृत्ति वाले मनुष्य पशु-पत्ती श्रादि तिर्यक् योनियों में उतपन्न होते हैं ।

जब शिव तामसी हैं तो उनके सक भी तामसी होना चाहिए भौर शिव को भी तामसी फल देना चाहिये (गीता १४। १६-१७) भौर शिव भक्तों का भोजन भी परलोक में दामसी होना चाहिये। शिव के भक्त मरने के बाद राचस बेताल भूतादि बन कर शिव के गण होते हैं, गण और प्रमथ संज्ञा भूत आदिकों की है भौर इन्हीं के शिव स्वाभी हैं और इन्हीं को तामसी फल देते हैं यथा-

> यः शर्व रक्षमां नाथस्ताममानां फल वदा २५। वैदाल गण भूतानां स्वामी भोग फल वदः २६। इति कूर्मपुराण उत्तराई अध्याय ६।

नोट-शिव का मोग लगाया अस मिठाई मेवा फल खूल ज-लादि प्रहण न करें क्योंकि इसका शाकों में निषेप है, देखो मेख बनाया "निर्माल्यबोध " और सब प्रकार से शैव धर्म निषेध जानमा हो सो मेरा बनाया हिंसातर्काषकी मन्थ देखो। बाह्यण से ! चांडाल भो विष्णुमक श्रेष्ठ है बयाः — चांडालोवि मुनि श्रेष्ठ विष्णु भक्तो हिजाधिकः । विष्णु भक्ति विहीनश्च हिजोपि स्वप्चायमः ४१ । इति नारदीयपुराण पूर्वखरड खव्याय ३४।

ब्राह्मणाः क्षत्रिया बैश्याः श्रुद्धाश्चान्येन्त्यजास्तथा । हिरिभिक्तिप्रकाये ते कृतार्था न संशयः २ । हिरिभक्तो विप्रो ऽ पि विद्येयः श्पचाधिकः । हिरिभक्तः श्वपाको ऽपि विद्यो यो त्राह्मणाधिकः ३। स कथं ब्राह्मणो यस्तु हरि-भक्ति विवर्जितः । स कथं श्वपचो यस्तु भगवद्धक्ति मानसः ४ । श्रव्याजेन यदा विष्णुः श्वपाके नापि पूज्यते । वदा पश्येचयप्येवं चतुर्वेद द्विनाधिकम् ५ ।

इति पद्मपुराण क्रियायोगसारखंड श्रव्याय १६। त्यक्तवा वैकुंडनार्थ तयन्यमार्गे कर्थ रमेत्। श्रक्त हीनेश्च चतुर्वेदः पहितैः किं प्रयोजनम् ९८। स्वपचो मक्ति युक्तस्यु त्रिदशैरपि पूज्यते। स्वकरे कंक्णं वद्धा द्र्पेणैः किं प्रयोजनम् ९९। इति पद्मोत्तरखंड श्रव्याय १३२। इवणाको ऽ पि मद्गक्तः सम्यक् श्रद्धा समन्वतः । मामोतिभिमतां सिद्धिमन्येषामत्र का कथा १८८ । इति महापुराण अध्याय ६९ ।

नोट-गीता ९ । ३२ देखो ।

विषाइद्विषणगुणयुतादरिवन्दनाभपादारिवन्द विश्वसा-च्छ्रवचं वरिष्ठभ्। मन्ये तदर्पित मनो वचने हितार्थ प्राणं पुनाति स इतं न तु भूरिमानः १०।

इति भागवत स्कंध ७ अध्याय ९।

नोट-और गीता ९। ३२भी देखो। वृद्धहारीत स्वृति अध्यायर छोक ३१ में लिखा है कि अवैष्णव ब्राह्मण को रवपाक और अधर्मी जानो वह मरने के बाद रौरव नरक को जाता है। राज्य कल्पद्रुम ब्राह्मण शब्द के अन्तर गत लिखा है कि जो द्विज विष्णु मंत्र और एकाद्शी वत से रहित है वह जैसे विना विष का सर्प ऐसे जानो।

विष्णु भक्ति से किरात हण श्रोप पुलिंद पुलकस श्रामीर कंक यवन खसादि श्रौर भी पापी शुद्ध हो जाते हैं इति भागवत इकंध २ श्रध्याय ४ श्लोक १८। विरक्त (वैरागी) धर्म यथाः—

न तस्य जन्म कर्माभ्यां न वर्णाश्रम जातिथिः। सज्जते ऽ स्मिन्नहंभावो देहेवै स हरेः मियः ५१। इति सागधन स्कंघ ११ कव्याय २।

ब्रान निष्ठो विरको वा महक्तो वा ८ न वेशकः।
स तिङ्गानाश्रमांस्त्यक्त्वा चरेद्विधि गोचरः २८।
वदेदुन्मत्त बढिद्रान्गोचर्या नैगमश्चरेत्।
बुधो बात्तकवत क्रीडेत कुशलो जडवच्चरेत् २९।
वेदवाद रतो न स्याच पाखण्डो न हेतुकः।
शुष्क बाद विवादेन किंचित्पक्षं स्थाप्रयत् ३०।
इति भागवत स्कंष ११ अध्यास १८।

वर्जितास्ते ऽ पि सद्धमें राष रंगैने रंगिताः ८२। इति पञ्चसर्गीय महारामायण सर्गे १।

नोट—मह्यभारत आरवमेथिकपर्वा अध्याय १९ श्लोक ८ से १३ तक भी देखो। विरक्तों को यह अध्याय संपूर्ण देखना चाहिये। शान्तस्समान मनसा च सुशीलयुक्तः तोष समा गुण दया ऋतु बुद्धि युक्तः। विज्ञान ज्ञान निरतः परमार्थे बेन्तानिर्धामको ऽभव मनाः स च रास भक्तः ९। इति पद्धसर्गीय महारामायण सर्ग २। विष्णोर्नीम सहस्राणां पठनाह्मभते फलप्। तत्कलं लभते सत्यां रामनासस्मरञ्जपि ९०। इति पद्मपुराण सप्तः कियायोगसार खण्ड अध्याय १५॥।

विरक्तस्या ऽऽ त्मरक्तस्य सुखमेकान्त सेवनम् ।
आत्मानुचितनं चैव वेदान्तस्य च चितनम् ४५ ।
इति देवीभागवत स्कंच १० ।
मन्यों यदा तिकत समस्त कर्मा निवेदितात्मा विचिर्षितोये ।
तदामृतत्वं प्रतिपद्यमानोमयात्म भूयाय च करपते मैं ३४।
इति भागवतस्कंघ ११ अध्याय २९ ।

सर्वत्राहरविता देशः सप्त दीपैक दंड घृत् । भ्रान्यत्र ब्राह्मस्य कृतादन्यात्राच्युत गोत्रतः १२ । इति भागवतस्कं घ ४ अध्याय २१ ।

किं वा भागवत।धर्मं न प्रायेखनिक्षिताः । प्रियाः परमहंसानां त्यवसन्युतिषयाः ३२ । इति भागवत वर्षव १ अध्याय ४ । त्रैगुएय विषया वेदा निस्त्रैगुएयो भवार्जन ४५। ऋध्याय २। सर्व धर्मान्परित्यज्य मामेकं शरशां त्रज ६६। ऋध्याय १८। इति गीता।

नोट-प्रंरृत्तिलच्योधर्मेः ५१। इति महाभारतश्रतुशासन पर्वे अध्याय ११५।

सर्व कर्म परित्यामी नित्य तृप्तो निराश्रयः।
पुरुषेन न पापेन नेतरेण च लिप्यते ९७।
इति अन्नपूरणोपनिषद् अध्याय ५।

अज्ञानान्य तयोष्ठपं कर्य धर्मादि स्वसणम् १२ । स्वयं प्रकाशमात्मानं नैव मां स्वष्टु पहीते । सर्व साक्षिणमात्मानं वर्णाश्रम विवर्जितस् १२ । इति वागहोपनिषद् अध्याय २।

मृत्या मोहमयी माता जातो वीच मयः सुतः।
मृतकं इय संपासी कथं संघ्यास्पादमहे १३।
ह्याकाचे चिदादित्यः सदा भासति भासति।
नास्तमेति न चोदेति कथं संघ्यास्पादमहे १४।
इति गैकेश्युपनिषद् अध्याय २।

निरोधन्तु स्रोक वेद व्यापार न्यासः ८। तस्यात् सेव प्राज्ञा सुम्रुक्षाः ३३। नास्ति तेषु जाति विद्या खप कुल धर्म क्रियादिभेदः ७२। इति नारदभक्तिसूत्र।

जिमि हरिभगति पाइ नर तजिंह आश्रमी चारि १७। किंति पाइ जिमि धर्म पराहीं १६।

इति मानसरामायण किङ्किधाकांड । अ

त्यागिंद कर्म सुभासुभदायक, अनिहें वोहिंसुर सुनि नायक ४१ कर्म किहोहि सुरूपहिं चीन्हें

अय कि रहइ हरि चरित बखाने ११२।

इति मानसरामायग् उत्तरकांड।

नाना जनम करम पुनि नाना, किये जोग जम मखतपदाना १६ इति मानसरामाच्या उत्तरकांड।

नर विविध कर्म अपर्ज वहु मत सोक प्रद सव त्यागहू। विस्थास करि कह दास तुलसी राम पद्अनुरागहू ३९ इति मानस रामायण आरख्यकांड।

अ तुलसीकृत रामायण को ही रामचित्तमानस या मानसरामायण कहते हैं।

तज्यो पिता प्रहाद विभीषण दन्धु भरत महतारी, बिला गुरु तज्यो कंत इजवनतिन भये सुद मङ्गलकारी १७४। इति विनयपत्रिका।

करन सोनि जनमेड जह नाहीं, यें खगेस खम खम जगमाहीं। देखेऊ सब कर करम गुलाई, सुखी न भवेड अविंह की नाई ९६। इति मानसरामायण उत्तरकांट।

श्रवत्थ सदशं नित्यं जन्म मृत्यु जरायुतम् ।
वैराग्य बुद्धिः सततमात्म दोष विषेक्षकः ८ ।
इति महाभारत श्राश्वमेधिकपर्व श्रध्याय १९।
नोट-वैराग्य का स्वरूप देखो गीता १८ । ५२।
ऐषागितिर्विकता नामेषधर्मः सनातनः ३८ ।
इति महाभारत श्राश्वमेधिकपर्व श्रध्याय ५१।

नीट →
दोहा- अहमद अग जग दिशि विदिशि, आम धाम बन भौत ।
प्रेम तो खोजत फिरत है बिन शिर को धड़ कौन १।
अहमद अतिशय कठिन है, प्रेम करन जगदीश।
जो कीजै तो दीजिये तन मन लजा शीश २।
कहा करव वैकुरुठ ले कल्प कृक की छाँह।

च्छहमद ढाक सहावनो जो प्रीतम गल बाँह ३। नारायण अतिशय कठिन शीतम पुर को बाट। या मारग सो पग धरै प्रथम शीस दे काट ४। चढ़के सोम तुरङ्ग पर चितवो पावक साहि। शेम पन्थ ऐसो कठिन सब सों निबहत नाहि ५। तन सुख चाहें शीस धड़ मन निज करमें लोग। "नागर" वे संसार में नहीं प्रेम के जोग ६। टके सेर नहिं बिकत है प्रेम बजार बजार। "नागर" रतन अमोल यह लेत शीस को भार ७। मूल्य तन रहीम है कर्म वश मन राखो वहि छोर। जल में उत्तरी नाव ज्यों खैंचत गुनके जोर ८। पापों से घिरणा करें नहिं पापी से सोय। " नागर" तौ फिर अस वनै कबहुं बनी न होय ९। रोगों से घिरणा करें नहिं रोंगी से सोय। "नागर" तुव कल्यागा जग जीव दया से होय १०। राक्स धर्म यथाः-

पर दारावमर्शित्वं पारक्यार्थे लोलपाः ।
स्वाध्यायस्त्रयंवके + भक्तिर्घमीयं राक्षसःसमृतः २६ ।
इति वामनपुराण अध्याय ११।

⁺ हरः स्मर हरो अर्शस्थ्यस्वकश्चिपुरान्तकः ३५ । इत्यम्बरः ।

यक्ष रक्षः पिशाचाचं मद्यं मांसं सुरासवम् । तद्वाह्मारोन नातव्यं देवानामरनता हवि ९६ । इति मनुस्मृति अध्याय ११ ।

स्वहा स्वधा ८ मृत भुजो देवा: सत्यार्जव विया: ।

क्रव्यादान राक्षान्विद्धि जिह्वानृत परायगान् २७ ।

इति महाभारत अनुशासनपर्व अध्याय ११४ । ×

आसुर पात्र (वर्तन) जो कि श्राद्ध में निषेध हैं यथाः—

आसुरेगा तु पात्रेगा यस्तु दद्यात्तिकोदकम् ।

पितरस्तस्य नाश्नन्ति दश्चर्याणि पश्च च ९ ।

अरतः पंचमोवेदः सुपुत्रः सप्तमोरसः १० ।
 इति समयोचित पद्यमालिका जकार ।
 सपादलचं च तथा भारतं मुनिना कृतम् ।
 हित होत पंचमं वेद संमतम् २६ ।
 इति देवीभागवत स्कंध १ अध्याय २ ।
 भागवत स्कंध १ अध्याय ४ श्लोक २० भी देखो ।
 इतिहास पुरागादि परमात्मा की स्वास से निकले देखो २४
 पुष्ठ को टिप्पणी ।

कुलाल चक्र निष्पन्नमासुरं मृन्ययं स्मृतम् । तदेवहस्त घटितं स्थाल्यादि दैविकं भवेत् १० । इति कात्यायनस्मृति खण्ड १० ।

श्चर्य-जो मनुष्य श्वासुरपात्र से तिलोदक देता है उसके घर १५ वर्ष तक पितर लोग नहीं खाते ९। कुम्हार के चाक से बने हुए मिट्टी के पात्र को श्वासुरपात्र श्वीर हाथ से बने हुये थाली श्वादि मिट्टी के पात्र को देवतायों के पात्र कहते हैं १०।

नोट-बौधायनस्पृति प्रश्न २ अध्याय ८ श्लोक २४ में लिखा है कि गेरुआ वस्त्र धारण करके जप होम तथा प्रतिप्रह करने से और हन्य तथा कन्य की हिव देने से वे देवताओं को प्राप्त नहीं होतीं हैं। वृहद्विष्णुस्पृति अध्याय ७९ श्लोक १ में लिखा है कि रात के लाये हुए जल से श्राद्ध नहीं करें।

श्राद्ध यज्ञ नाश यथाः—

वस्नाभावे क्रियानास्ति यज्ञावेदास्तर्पासि च । तरमाद्वासांसि देयानि श्राद्धकाले विशेषतः ७२ । इति ब्रह्मपुराण श्रम्याय १९२ ।

पिशाचधर्म यथाः—

अविवेकस्तथा ऽ ज्ञानं शौच डानिरसत्यता ।

×िशाचानामयं धर्मः सदा चामिष गृह्युता २७। इति वामनपुराण अध्याय ११।

नाट-ऊपर ९६ श्लोक देखो। निश्चर धर्म यथाः—

जिहिविशि होइ घरम निर्मूला सो सब करहिँ बेद मितकूला।

वरिन न जाइ अनीति घोर निसाचर‡ जो करिं।

हिंसा पर अति मीति तिन्हके पापिहं कविन मिति १८३।

मानिहँ मातु पिता निहँ देवा साधुन्ह सन करवाविहँ सेवा।

जिन्हके यह आचरन भवानी ते जानहु निसिचर सव मानी१८४।

इति मानस रामायण बालकाएड।

कहुँ महिष मानुष थेनु खर अज खल निसाचर भच्छहीँ ३ । इति मानस रामायण सुन्दरकाण्ड ।

[×] पिशाचः -, पुं, (पिशितं मांसमश्रातीति। पिशित + स्रश + "कर्म्भरयण्।" ३।२।१। इति अग्। ततः "पृषोदरादीनि यथो-पदिष्टम्।" ६।३।१०९। इति शितभागस्य लोपः स्रशंभागस्य शाचादेशः।)

¹⁻राज्ञस पिशाच निश्चिर निशाचर सबकी एकही संज्ञा है।

महानिश्चर धर्म यथाः--

करै निशाचर कर्म जो भजपरतीमद्यास ।
निश्चिर कुल भूषण सोइ न दृष्णपरिहास २२१ ।
इति मानसमयक लंकाकांड ।
म्लेचधर्म यथाः—

नजात्या ब्राह्मणश्चात्र क्षत्रियो वैश्य एवच ।
न श्रुद्रो न च वै म्लेच्छो भेदिता गुण कर्मभिः ३८।
त्यक्त स्वधर्मा चरणा चृष्टुणाः ५र पीडकाः ।
चंडाश्च हिंसका नित्यं म्लेच्छास्तेद्वविवेकिनः ४४।
इति शुक्रनीति अध्याय १।

श्रर्थ-इस जगत में जन्म से ब्राह्मण चत्री बैश्य शूद्र म्लेच्छ नहीं होते हैं, किंतु गुण श्रौर कर्म के भेद से होते हैं ३८। त्याग दिया है श्रपने धर्मका श्राचरण जिन्होंने ऐसे निर्दयी पर को पीड़ा देने हारे श्रत्यंत कोधी श्रौर नित्य हिंसक श्रर्थात् मांस खानेवाले जो श्रज्ञानी मनुष्य हैं वे म्लेच्छ हैं ४४। हैत्य धर्म यथाः—

> मत्स्य मांसापि सु भीता मृषा वचन भाषिणः २०। नर जातिषु दैत्यानां चिन्हान्येतानि भृतले २३। इति पद्मपुराण सृष्टिखंड अध्याय ७६।

दैत्या हिंसानुरक्ताश्च ३६।

इति ब्रह्मपुराग् अध्याय ५३

"गायवधे ते तुरका कहिये उनते वैका छोटा। कहिं कबीर सुनी हो संतो किल का ब्राह्मण खोटा ५, शब्द ११। कहकबीर वे दीनों भूले रामहिं किनहुं न पाया। वे खिसया के गाय कटावें बादे जनम गर्वाया५, शब्द ३०।इति वीजक कबीरदास शब्द प्रकरण"

नास्तिक धर्म यथाः-

हिंसा पराश्चये केचिचे च नास्तिक वृत्तयः। जोम मोह समा युक्तास्तेचे निरय गामिनः ४। इति महाभारत आश्वमेधिक पर्व अध्याय ५०।

पञ्ज धर्म यथाः—

मांस भक्ष्याः सुरापाना मृर्खाश्चाक्षर वर्जिताः । पशुभिः पुरुषाकारै भारक्रांतास्ति मेदिनी २१ । इति चाड्क्य नीति अध्याय ८ ।

नीट:- 'जिब मित मारहु बापुरा सब का एके प्राण । हत्या कबहुँ न छूटि है कोटिन सुने पुराण २०१ । जीव घात न कीजिये बहुर लेत वह कान। तीरथ गये न वाचि हो कोटि हिरा दे दान २०२। तीरथ गये तु तीन जन चित चक्कत मन चोर ।

एकौ पाप न काटिया लादे दसमन श्रीर २०३।

इति कबीरबीजक साखी प्रकरण।"

श्चात्मतीर्थं महातीर्थमन्यतीर्थं निरर्थकम् ५३ । चित्तमन्तरगतं दुष्टं तीर्थं स्नानैर्ने शुध्यति । शतशो ऽपि जलेंथीतं सुराभाग्रडमिवा शुचि ५४ । इति श्रीजाबालदर्शनोपनिषत् खण्ड ४ ।

सब का धर्म यथाः-

भर्वे प्रत्यक्ष धर्माणो जित द्रोधा जितेन्द्रियाः । दमेस्थितार्च सर्वे ते हिंसा भेद विवर्जताः ८ । इति महाभारत आश्वमेधिक पर्व अध्याय ९२ ।

चारों वर्णों का धर्म यथाः—

अहिंसा सत्यमस्तेय शौचिमिन्द्रिय निग्रहः । एतं सामासिकं धर्मं चतुर्वरायें ऽ त्रवीन्मनुः ६३ । इति मनुस्मृति अध्याय १० ।

तथा —
श्रिहिंसा पिय वादित्वमपेशुन्यमकन्पता ६७ ।
सामासिकाममं धर्म चतुर्वएर्ये ऽ व्रवीन्मतुः ६८ ।
इति कूर्मपुराण अध्याय २ ।

श्राहिसा सत्यमस्तेयमकाम क्रोध लोभता।
भूतिमयेहिते हा च धर्मीयं सार्व बार्शिकः २१।
इति भागवत स्कन्ध ११ अध्याय १७।

नोट-परेषां प्राण रत्तार्थं वदाम्ये वानृतं वचः ३९४। इति पद्मपुराण सृष्टि खण्ड ऋष्याय १८।

त्राह्मग् धर्म यथाः—

ब्राह्मणानां सदा भक्ष्यं इविष्यं च निरामिषम् । श्रामिषस्य परित्यागात् सूर्यवत्तेजसाक भवेत् ५४।

क किञ्चित सूर्यप्रहण और चन्द्रप्रहण का निर्णय।
 प्रहण में अत्र खाने का निषेध यथाः

सुर्य प्रहरोतु नारनीयात् पूर्वं यांश् चतुष्टयम् । चन्द्रप्रहेतु या यां स्त्रीन् वाल वृद्धातुरैविनेति । इति माधवीये वृद्ध गौतमोक्तेः

नोट-शब्दकल्पद्रुम प्रहरूण शब्दान्तरगत में भी ऐसा ही है। अहोरात्रं न भोक्तव्यं चन्द्र सूर्य प्रहो यदा। मुक्ति दृष्ट्वातु भोक्तव्यं स्नानं कृत्वा ततः परम्। इति विष्णुयर्माकं। नित्य नृतं भांदेन कर्तव्यः पाक एव च। अथवा पक्ष पर्यंतं ततस्त्याज्यं मनीषिभिः ५५। इति ब्रह्मवैवर्तपुराण श्रीकृष्णजन्मखंड श्रध्याय ८३।

प्रहण में वाल बूढ़े रोगी श्रादिकोंके श्रम्न खानेका निर्णय यथाः— वाल वृद्धातुराणां तु प्रहयामात् पूर्वमेक यामो निषिद्धः। इति कर्कानुसारिगोक्ते।

प्रहण में सब वर्णीं को सृतक यथाः—

सर्वेषामेव वर्णानां सृतकं राहु दर्शने । इति हेमाद्रौ षट्त्रिंशोक्ते ।

प्रहण में अञ्जुद्ध न होने वाली वस्तुयें यथाः —

स्रारनालं २ पयस्तकं द्धिस्नेहाज्य पाचितम् । मणिकस्थोदकं चैव न दुष्येद्राहु सूतके । इति मर्गवार्चन दीपिकायां ज्योतिर्निवन्ध मेधातित्थोक्ते ।

तिल और कुश से वस्तुयें अशुद्ध नहीं होतीं यथाः—

श्चन्नं पक्तमित्याच्य स्नानं च वसनं गृहे। बारि तक्रारनालादि तिल दंभें ने दुष्यति।

इति मन्वर्थमुक्तावस्योक्ते।

परम घरम स्नुति विदित श्रहीँ सा १२१। इति मानसरामायण उत्तरकांड।

प्रहण में अन खाने का प्रायश्चित यथाः-

चन्द सूर्य महे भुक्त्वा प्राजापत्येन ३ शुद्धचित । श्रास्मिन्नेव दिने भुक्त्वा त्रिरात्रेणीय शुद्धचतीति । इति माधवीये कात्यायनोक्ति

सूर्यप्रहण में कुरुत्तेत्र स्नान का महापुण्य यथाः—

गंगा कनखलं पुरुषं प्रयागः पुष्करं तथा। कुरुचेत्रं महापुरुषं राहु प्रस्ते दिवा करे। इति देवी पुरागोक्ति

उक्त प्रसङ्ग, इति कमलाकर भट्ट कृत निर्णयसिन्धु परिच्छेद १

प्रह्मा निर्णयान्तरगत।

सूर्य प्रहण और चन्द्र प्रहण के समय स्नानदानादि कार्या के लिये सब जल गङ्गा जल के समान होजाते हैं यथाः—

सर्व गङ्गा समं तोयं राहुप्रस्ते दिवाकरे। सोमप्रहे तथैवोक्तं स्नानदानादि कर्मसु २७। इति पाराशरस्मृति अध्याय १२।

श्रहिंसा परमो धर्मो विपाणां नात्रं संशयः।

नोट-कात्यायनस्मृति खण्ड १० श्लोक १४ में चौर गोभितस्मृति वपाठक १ श्लोक १५० में भी ऐसा ही है।

१- तीन घरटे का एक यां (पहर) होता है। २ अर्क दवाई वगैरह । ३ प्राजापत्यव्रतके लिये मनुस्मृति अध्याय११ श्लोक २१२ श्रीर याज्ञवल्क्य स्मृति ष्राध्याय ३ श्लोक ३१९ से ३२० तक देखो। वृहत्पाराशरीय स्मृति अध्याय ७ ऋोक ३१२ में तिखा है कि स्त्री रजस्वला होने पर पहिले दिन चाएडालिनी दूसरे दिन हु घातिनी और तीसरे दिन धोबिन सद्रा रहती है चौथे दिन शुद्ध होती है। ३१३ और ३१४ ऋोक में लिखा है कि त्रिशिरा नाम दैत्य ब्राह्मस्। को इन्द्र ने मारा उसकी हत्या का फल स्त्रियों को दिया है तब से स्त्रियें रजस्वला होने पर ३ दिन श्रशुद्ध रहती हैं तबसे इनके छूने देखने और रित करने का विशेष दोप लिखा है। सहबास और साथ पलँग पर लैंटने का निषेध, इति मनुस्मृति अध्याय ४ क्लोक ४०। तेज बुधि बल सहबास करने से नाश हो जाता है, इति मनुस्मृति अध्याय ४ श्लोक ४१ और ४२ भी देखो । उसके हाथ का छुवा अन्न न खाय, इति मनुस्मृति अध्याय ४ श्लोक २०८। उसको भोजनकाल में न देखे, इति मनुस्मृति श्रध्या- दया सर्वत्र कर्तव्या त्राह्मणेन विजानता ३९ TX इति देवीभागवत स्कंध २ अध्याय ११ ।

हिंसा चैव न कर्तव्या चैघ हिंसा तु राजसी।

ब्राह्मणैः सा न कर्तव्या यतस्ते सात्विकाः मताः।

इति शब्दकल्पद्रुम हिंसाशब्दान्तरगत श्राद्धविवेक टीका गोविन्दानन्द घृत वृहन्मनु का वचन।

य ३ ऋोक २३९ । उसके छूनेका निषेध, इति वृहत्पाराशरीयस्मृति अध्याय ७ ऋोक ३०९ । अङ्गिरास्मृति ऋोक ३८ और आपहतंब स्मृति अध्याय ७ ऋोक १ से ४ में लिखा है कि रजस्वला खी पहिले दिन चाएडाली दूसरे दिन ब्रह्मघातिनी तीसरे दिन घोषिम के समान रहती है चौथे दिन में शुद्ध होती है और पाराशरस्मृति अध्याय ७ श्लोक २० और पद्मोत्तरखण्ड अध्याय ७० श्लोक ४० में भी ऐसा ही है । उशनस्मृति अध्याय ५ श्लोक ३२ में लिखा है कि रजस्वला खी को न छुये। खी को रजीदर्शन होने पर क्या कर्तव्य है, देखो व्यासस्मृति अध्याय २ श्लोक ३० से ४० तक ।

× हिंसा ८ नृत परा लुव्धाः सर्व कर्मोप जीविनः।
कृष्णाः शौचपरिम्रष्टास्ते द्विजाः शूद्रतां गताः ५९।
इति नारदीयपुराण पूर्वभाग श्रभ्याय ४३।

खी को भी हिंसा करने का अधिकार नहीं है यथा:-

प्रमादोन्माद रोषेच्या वश्चनं चातिमानिताम् । पेशुन्य हिंसा विद्वेषमहाहंकार धूर्नताम् ३४ । नास्तिक्यं साहसं स्तेयं दम्भान्साध्वी विवर्जयेत् ३५। इति व्यासन्मृति श्रध्याय २ ।

नोट—''श्रधार्मिको नरो यो हि यस्य चाप्यनृतं धनम्। हिंसा रताश्च यो नित्यं नेहासौ सुख मेधते १७०। इति मनुस्मृति श्रध्याय 🕸 ।

> श्रुतिस्तु वेदो विज्ञेयो धर्मशास्त्रं तु वै स्मृतिः। ते सर्वार्थेष्वमीमांस्ये ताभ्यां धर्मो हि निर्वभौ १०। इति मनुस्मृति अध्याय २।

श्रर्थ—वेद को श्रुति और घर्मशास्त्र को स्मृति कहते हैं ये सब प्रयोजनों में अतर्क हैं अर्थात् इनमें किसी प्रकार का तर्क नहीं करना चाहिये क्योंकि सम्पूर्णधर्म इन्हीं से प्रकाशित हुये हैं १०।

तमः शुद्धे रजः तत्रे ब्राह्मणे सत्वमुत्तमम्।
इत्येवं त्रिषु वर्णेषु विवर्ते ते गुणास्त्रयः ११।
इति महाभारतश्चरवमेधिकपर्व अध्याम ३९।
ब्राह्मण को मछली खाना मना है थथाः—

न भक्षणीयं वराहं मांसं मत्स्याश्र^{क्ष} सर्वशः । श्रभक्ष्या त्राह्मणैरेते दोक्षितैश्र न संशयः ३६ । इति वाराहपुराण श्रध्याय १२७।

"नागर-हम एक प्रश्न मछली खानेवालोंसे करते हैं कि-मछली खानेवाले सुवर के मांस को क्यों नहीं खाते ?

बादी सुवर का मांस श्रशुद्ध होता है। नागर-क्यों ? वादी-सुवर विष्ठा खाता है।

नागर-तब मछली भी तो विष्ठा खाती है। अलावा इसके श्रौर भी गौ, सुवर, छत्ता, मरे हुए मनुष्य हिन्दू मुसलमानादि सुरों का मांस खाती है, अर्थात् जिस जीव का मांस विष्ठा थूक खखार वगैरह उसके सामने आयगा तो वह खाजायगी। इससे सुवर से मछली ज्यादा अशुद्ध हुई। इस प्रत्यच प्रमाण से मछली खानेवाले भंगी (टट्टी साफ करनेवाला) और म्लेच्छ (मुसलमानादि) से भी ज्यादा नीच हुए, मछली का ही ज्यादा प्रचार होने

अ मछली मारने के विषय में पाराशरस्पृति ऋध्याय २ श्लोक
 ११-१२ देखो ।

से बंगाल श्रीर उड़िया श्रादि देश म्लेच्छ देश कहे जाते हैं. इस प्रमाण से बिहार (मिथिला) देश को भी म्लेच्छ देश कहेगे, क्यों कि यहां के ब्राह्मण ही मछली मांस खाते हैं। श्रीर मांस भी किसी का शुद्ध हुवा है।

बादी-बस इसके सिवाय और तो कोई दोष नहीं है ?

नागर-बड़ाभारी दोष यह है कि सब जीवों के मारने की हत्या लगती है, देखो धर्मशास्त्र मनुस्मृत अध्याय ११ स्त्रोक ११६ से १४५ तक और पाराशरम्मृति अध्याय ६ स्त्रोक १ से २१ तक। अब आप ही कहिये कि हत्यारे का साथ कीन करें, जिनको अपना पेट ही भरना है और धर्म से मतलब नहीं है, जिसको यमराज के यहां यमदूतों की मार सहना हो वह कर सकता है। और इसी हत्यारे के कारण कोई लोग इस लोक में और कोई पर लोक में दुखी होते हैं और यही मनुष्यों के बन्धन का हेतु है। और दूसरी बात यह है कि चमड़े. मांस हड़ी का ठेका ब्राह्मण, चत्री, वैश्य और शुद्रों ने लेलिया तो कसाई और चमार लोग बिचारे क्या कुजगार करेंगे। हां! एक बात अच्छी है कि जब तुमने उनके नरक का स्टांप खरीद लिया तो उन्हें स्वर्ग मिलेगा यही तुग्हारा पुण्य हैं। और पापों का स्टांप पास ही रक्खे हो इसमें क्या पूछना है।"

🕸 निर्देशी हिंसक मांस मछली मदिरा खानेवाला वण्णव नहीं होसकता क्योंकि विष्णु सब प्राणियों में परिपृर्ण हैं (पृष्ठ ९ देखों) प्राणियों को दुख पहुँचानेसे विष्णु की हिंसा होगी और श्राज तक अपने इष्टकी हिंसा किसीने नहीं की । पुनः "जीवप्रास धारणे" घातु पर भी घ्यान दो । बिना द्या धर्म के वैष्णव होना भूठा है बहरूपिया कैसा वेष बनाये है, वह बंचक है यथाः— दयाधर्म परो नित्यं विष्णुधर्मेषु तत्पराः ३।

इति पद्मोत्तरखरड अध्याय १३०।

श्रर्थ — जब मनुष्य सदैव दयाधर्म में रत रहता है तब विष्णुधर्म में तत्पर होता है ३। विष्णुके पाँच संस्कारों को भी धारण करना पड़ता है, शंख-चक्र की या घनुष-वाण की तप्त छाप१ तुलसी काष्ठ २ ऊर्द्धपुराड्र तिलक ३ राम या ऋष्ण मन्त्र ४ विष्णुनामान्त दास नाम (रामदास या ऋष्णदास) ५ । इसके श्रतावा बैंध्णवधर्मग्रन्थोंके श्रनुकृत चलना पड़ता है श्रोर वैध्णव धर्म में हिंसा लेशमात्र नहीं है तब विष्णु को मांसादि अशुद्धचीचों का भोग कैसे लग सकता है। त्रौर श्रीरामसंस्कार वर्जित को पशु कह सकते हैं (पृष्ठ १०० की टिप्पणी में स्रोक २६)।

क्ष तिचत्रंयदि रूपयोवनवती साध्वी भवेत्कामिनी। तिश्चत्रंयदि निर्दया ऽ पि पुरुषः पापं न कुर्यात्कचित १२२। इति शुभाषित स्त्नाकर मिश्र प्रकरण।

जिनकी बुद्धि पापारक्त हो रही है, धर्म जिन में लेश मान भी महीं है वही कह सक्ते हैं कि भगवत धर्म में जीव हिंसा है और अगवत को मांस मछली समर्पण करना चाहिये। सच्छाओं में तो अगवत धर्म में लिखा है कि प्राणि मात्र में वाहर भीतर ईश्वर को ही देखें और आकाशवत सब जीवों में ईश्वर परिपूर्ण हैं। वहीं पण्डित है जो ऊँच नीच प्राणी मात्र को ईश्वर भाव जान कर पूजे और सम दृष्टि देखें। अन्तरयामी ईश्वर की दृष्टि से सब को प्रणाम करें देखिये।

भगवत धर्म यथाः—

हंत ते कथियध्यापि पप धर्मन् सु मंगलान् । -याच्छ्रद्धयाचरन्पत्यों सृत्युं जयित दुर्जयस् ८ । मामेव सर्व भूतेषु वहिरंतरपाष्ट्रचस् । ईक्षेत्रात्मिन चात्मानं यथा स्वममलाश्चयः १२ । इति सर्वाणि भूतानि मद्भावेन महाद्युते । सभा जयन्पन्यमानां ज्ञानं केवलमाश्चितः १३ । ब्राह्मणे पुल्कसे स्तेने ब्रह्मण्ये ऽकें स्फुर्लिंगके । श्चकर्रे क्रूरके चैव समहक् पंहितो मनः १४ । विसृज्य स्ममानान्स्वान्दशं बीदां चं देहिकोस् । प्रस्मेदंदवद्व मावास्वचांदाल्गोस्वरस् १६ । श्चयंहि सर्व कल्पानां सञ्चीचीनो पतो मम । मद्भावः सर्वभृतेषु मनोवाकाय द्वतिभिः १९ । इति भागवत स्कन्ध ११ श्रद्याय २९ ।

अर्थ-श्री कृष्णजी उद्धव से कहते हैं कि हे उद्धव में सुमंगल अपने धर्म (ईश्वर धर्म) तुम से कहता हूँ, जिन धर्मों को श्रद्धा के सहित करने से मनुष्य दुर्जय मृत्यु को जीत लेता है ८। निर्मल चित्तवाला पुरुष सव प्राणियों त्रीर त्रपने में भी बाहर भीतर मुसको हो देखे मैं आकाश की नाई वाहर भीतर सब में सदा परि पूर्ण हूँ १२। जो इस प्रकार ज्ञान में स्थित हो सब प्राणिमात्र को मेरा ही भाव जान कर पूजे वही पण्डित है १३। ब्राह्मण नीच जाति चोर विष्णु सूर्य स्फुलिङ्ग (झ/ग्नकण्) सजन दुष्ट इन में समदृष्टि से देखने वाला ही पिर्देत कहाता है (गीता ५।१८)। तात्पर्य यह है कि ब्राह्मण श्रीर गी को ऊँची दृष्टि से देखे, श्रीर श्चन्त्यज जाति को श्रौर खस्सी मछत्ती श्रादि जानवरों को नीची दृष्टि से देखें वह मूर्ख है १४। इस वास्ते ! सन प्राणियों के अन्तर ईश्वर बास करता है ऐसा जान कर हेंसी लज्या मान अपमाब सब को छोड़ कूकर वारडाल गौ गया आदि सब जीवों को (१७ श्लोक देखों) भूमि में लोट सास्टाङ्ग प्रणाम करें १६। हे उद्धव ! यह सब पत्तों में मेरा पत्त सर्वोत्तम है कि मन बचन कर्म

से सब प्राणियों में मुक्ते देखें १९। सब प्राणियोंके साथ २ खस्सी (बकरा)मछली हिरनादि पशु पत्नी भी आगये। इस बास्ते मनुष्य किसी भी जीव की हिंसान करें, न मांस खाय ? नहीं तो वह ईश्वर द्रोही समभा जायगा श्रीर उसका लोक परलोक में कल्यान म होगा। बक्त श्लोक १२-१३ साची हैं। श्रीर जब स्वर्ग या बैकुंठ जहाँ कि मल की गन्ध नहीं है वहां पर देवता देवी ईश्वर मांस खायंगे तो राचसों का क्या भोजन है। मांस मद्य देवतावों का भोजन नहीं है न मनुष्यों का भोजन है किन्तु राज्ञसों का भोजन है। देखो मनुस्मृति अध्वाय ११ स्रोक ९६ यथा-यन्न रक्तः पिशाचन्नं मद्यं मांसं सुरासवम् । तद्वाद्यगोन नात्तव्यं देवा-नामरनताहविः । + श्रौर वृद्धारीतस्मृति श्रभ्याय ९ श्लोक २८६, पद्मोत्तरखण्ड अध्याय २५५ श्लोक १०१, महाभारत अनुशासन-पर्व प्रध्याय ११५ रलोक २७, यजुर्वेद श्रध्याय २ मन्त्र १९, साम-वेद छन्दर्शाचिक अम्नेयपर्व अध्याय १ खस्ड ८ ऋचा ८ भी देखो।

सर्वधात्मिन संपश्येत्सचासच समाहितः। सर्वे सात्मानि संपश्यन्नाधमें कुरुते मतः ११८। इति मनुस्मृति अध्याय १२।

⁺ मन्वर्धमुक्तावली टीका में इस क्लोक का ९५ नंवर है कुल्कुकभट्टभी लिखते हैं कि ''मांसंच प्रतिषिद्धम्"।

अर्थ — सतासत भाव को जानता हुआ (ब्राह्मण) सब जीवों मैं समान देखें क्यों कि सब जीव समान देखने से रागदीय पैदा नहीं होता, राग दोष न होने से अधर्म में मन नहीं जाता ११८। जो सब जीवों में आत्माको देखता है वहीं ब्रह्म को प्राप्त कर सक्ता है अन्यथा नहीं, १२५ रक्षोक देखा।

> सर्व भूनास्थमात्मानं सर्व भूनानिचात्मिनि । ईक्षत योग युक्तात्मा सर्वत्र सम दर्शनः २९ । यो मां पश्यति सर्वत्र सर्व च मिय पश्यति । तस्वाहं न मलस्यामि स च मे न मलस्यति ३० । सर्वभृतस्थितं यो मां मनत्येकत्वमास्थितः । सर्वथा वर्तमानो ऽ पि स थोगी यि वर्तते ३१ । श्रात्मीपम्येन सर्वत्र समं पश्यति यो ऽ र्जुन । सुखं वा यदि वा दुःखं स योगी परमो मतः ३२ । इति गीतौ श्रध्याय ६ ।

त्रर्थ-जिसका मन योग x में स्थिर हो गया है उसकी हिंछि समान रहती है वह अपने को सब भूतों में तथा सब भूतों को अपने में देखता है २९। जो सब में मुक्तको और सुक्तमें सबको

[🗴] योगः संनहंनोपायश्यानंसंगतियुक्तिपुइत्यंगरः ।

देखता है उसके लिये कभी मैं नष्ट नहीं होता और मेरे लिये कभी वह नष्ट नहीं होता ३०। जो सब प्राणियों में मुक्ते देखता है चौर मेरा भजन करता है वह सर्घा प्रकार से वर्तता हुच्चा भी मुक्त में ही रहता है ३१। हे अर्जुन! जो जानता है कि मेरे समान दुख सुख सब को होता है, सबको सम दृष्ट से देखता है, वहीं अष्ठ है ३२।

श्राचार हीन डोब्णव नहीं होसक्ते श्रीर श्राचार में खान पान ही लिया गया है, श्राचार मृष्ट श्रासुर होते हैं गीता १६१७) हैवी संपदा के ग्रहण किये बिना टोब्णव नहीं हो सक्ते (गीता १६११-३)। हिंसक कठोर होता है श्रीर श्रासुरी संपदा वाला होता है (गीता १६१४) श्रीर टोब्णब दयालु होता है। श्रासुरी संपदा वाला होता है (गीता १६१४) श्रीर टोब्णब दयालु होता है। श्रासुरी संपद्म वाला नरक में जाता है श्रीर श्रासुरी योनियों में (गीता १६१६-१९)। जो भगवत को प्राणीमात्रमें नहीं देखते पुनः श्राचार मृष्ट भी हैं, श्रोर ठोब्णव धर्म में हिंसा श्रीर श्राचार की शिखा देते हैं उन की बुद्धि विज्ञिन्न है याने वो पागल है (गीता ९११२)।

स्नामान्यता तो किस्रो बैट्सव धर्म प्रनथ में विच्या की मांस सहली का भोग लगाना और पूजा करना नहीं लिखा। किन्तु यज्ञ में भी खीरकल फूलादि से विष्यु का पूजन ब्राह्मणकी करना चाहिये ऐसा लिखा मिलता यथाः— विष्णुमेवाभि जानन्ति सर्वे यह्नेषु ब्राह्मणाः । पायसैः सुमनोभिश्चतस्यापि यजनं स्मृतम् १० । इति महाभारत सोज्ञ धर्म श्राम्याय ९२।

तथा च-

हिंसादि रहिशं कर्म यत्तदीश्वरं पूजनम् ८। इति श्रीजावाल दर्शनोपनिषत् खण्ड २।

श्रवि च— पाने मनुष्य षडचर राममन्त्रसे विष्णुभगवानका पूजन करे यथाः षडक्षरेण मंत्रेण हरि पूजन कुत्ररः ९८। इति पद्मपुराण क्रियायोगसार खण्ड श्रध्याय १५।

शास्त्रोक्त विरुद्ध, बामपथ प्रवर्तक, विद्धद् ! पंडित ल्टन (लुट्टी) मा कि जिनका निवास, प्राम कोइलख, पोष्ट रामपट्टी (लोहट), जिखा दरभङ्गा, विहार प्रदेश में है। नम्बर१ की पुस्तक "धर्मनिर्णय पत्र" अर्थात् श्री १००८ विद्यापुदेव के निमित्त मत्स्य मांसार्पण करने का व्यवस्था पत्र नाम की अपने भतीजे श्यामा इत्त विद्यार्थी के नाम से सप्रमाण लिखी है, जो कि दुर्गाप्रशाद खत्रीद्वारा लहरी प्रेस काशी में छपी है। इसको खण्डन सर्यु बास और शिवनन्दन मा ने किया, इन्हीं दोनों महाशयों के खंडन को परिडत जी ने खरडन किया, जिस पुस्तक का नाम नम्बर र "धर्मानर्णय पत्र" अर्थात् मांस के विना विष्णुरेव की पूजा नहीं उचित है इसका व्यवस्थापत्र नाम की भी श्यामादत्तके नाम से सप्रमाण लिखी है, यह पुस्तक पं० रामनाथ का मैनेजर के प्रवंध में मैथिल प्रेस मधुवनीमें छपी है। अब इस नंबर२ की पुस्तकका खरडन समय पाके मैं कहाँगा। मैं नहीं जानता कि परिडत जी ने ऐसा क्यों. लिखा क्योंकि इस बात को सबही जानतेहैं कि बिना पशुघात किये मांस किसी प्रकार से भी पैदा नहीं होता, पशु काट ने से आत्मबब को प्राप्त होता है और मांस खाने से मलखाने के दोष को प्राप्त होता है, फिर आपने इस दुष्ट धर्म की क्यों शिचा दी (तदलं पशु घातादि दुष्ट धर्मेनिवोधत् ३६१ इति पद्मपुरासा सृष्टि खरड अध्याय १३)। लोहित और कृष्णकर्म, अर्थात् हिंसा मिले और केवल हिंसावाले कर्म करने वाले वैष्णव नहीं होसके (नम्बर २ की पुस्तक के टाइटिलपेज पर श्यामादत्त भा वैंड्णव लिखा है) केवल शुक्ष कर्म करने वाले ही वैंड्णव होसक्ते हैं (ऋध्यातम रामायण सर्ग ३ श्लोक २५)। हिंसा प्रिय तो उन्हीं मनुष्यों को होती है जो पापी, कर खल निसाचर श्रोर श्रनीतझ हैं (ये पाप निरताः क्र्राः ते ऽपि हिंसा प्रिया नराः २१ इति शिव पुराण जमासंहिता अध्याय ६। श्रीर बरनि न जाइ श्रनीति घोर निसाचर जो करहिँ, हिंसा पर श्रति प्रीति तिन्ह के पापिँ क्विषि

मिति १८३ इति वालकारख । कहुँ महिष मानुष धेनु खर बाज खल निसाचर भच्छहीँ ३ इति सुन्दर कारख । इति रामचरितमानस)।

कर्म ही मनुष्य से शुभाशुभ कराता है, पण्डित जी अपने पूर्वजन्म के कर्म को कैसे मिटा सक्ते हैं, कर्माधीन ही पण्डित जी का नाम रूप और कर्तव्य हुआ। नाम भी आप का लुट्टी वा लूटन कर्तव्यानुसार हुआ, और इन नामों की व्युत्पत्ति भी ऐसी ही हाती है, याने

जो धर्म को चुरावै उसे खुटी कहते हैं, श्रीर जो धर्म का खण्डन करें उसे खुटन कहते हैं क्याः—

खुटीत्यस्य च्युत्पत्तिश्च । खुटते इति खुटी, प्रतिघाता धंक खुट् घानोक्छादि इनि प्रस्यये प्रकृतेस्तुगागमे उनुदन्धे-त्संद्रा लोगयोः, छुन्वे कुदन्तत्वेन प्रातिपदिकत्वात्सी-सौ चे ति, उपपादीधे इ ल्रूचादिति सु लोगे न लोगे च खुटी-इति सिध्यति । धातुनामनेकार्यत्वादत्र खुट् घावोः स्तेयार्थे शक्तः, एवश्चयो धम्मे खुटते चोरयति स खुट्टीति, खुटीति शब्द वाच्य वर्तमान व्यक्तौ-एतादशार्थस्यैव सम्भव्यात्, भ्रव्यथा विष्णोमीस नैवेद्य निवेदनोक्तिस्तस्या न सम्भवेतः।

लुड़ीत्यस्य न्युत्पत्तिहुत्तवा लूटन इत्यस्य न्युत्पत्तिः क्रीयते । लुनाति धर्ममिति लूटनः, छेदनार्थक लू भातो-हणादि ट न क् मत्यये श्रतुबन्धेत्संज्ञा लोपयोः—कित्वा-हणुणाभावे इडभावे च क्रदन्तत्वेन मातिपादिकत्वात्सौ हत्वे विसर्गे तित्सिदिः ।

वकरे (स्रह्मी) भेड़े श्रोर मछत्ती का मारना संकरी करण पाप है अर्थात् इनके बध करने में मनुष्य शंकर होजाते हैं (६५ पृष्ठ की १८ पंक्ति से देखी) यह भी परिंडत जी की विपरीत बुद्धि होने का कारण है

पिछत जी की उपाधि (टाइटल) १ नम्बर और २ नक्बर दोनों पुस्तकों पर दिग्विजयो और पंचानन की लिखी है, हम नहीं जानते कि यह उपाधियें किसी ने दी हैं या अपने ही मनसे पुस्तकों पर छपा दी हैं। दिग्विजयी तो वहीं होसका है कि जो अहिंसा में तत्पर और सब जीवों का हित करने बाला हो, जैसी कि ऋषियों की आहा है, लिखा है कि—

अहिंसादि परः शान्तः सोपि वंद्यः सुरोत्तमैः । सर्वभूत हितो नित्यं सोभ्यत्यो दिग्दिनैः स्मृतः ५५। इति नारदीय पुराण पूर्वस्वयद अध्याय है। सर्व भूतों (जीवों) की गणना में खस्सी हिरन मछली पशु पत्ती आदि सब आगये।

अथवा दिग्विजयी वह हो सक्ता है कि जो अपनी लाज शुरम छोड़ दे। किसीने ऐसा कहा भी है कि—

"एकां लज्जां परित्यज्य सर्व्यत्रविषयी भवेत्"

यदि अपयश भी होगा तो क्या नाम न होगा। (पावन सस कि पुन्य वितु होई-वितु अध अजस कि पावइ कोई ११२इति राम चरित मानस उत्तर कांड) किसी प्राणी की जान न लेना इससे बड़ा कौन पुण्य होगा, किसी जीव की गहेन कोटना इससे बड़ा श्राव क्या होगा।

बाकी रही पद्धानन की उपाबि सो छापके लिये उपयुक्त ही है, बगों कि झाधारण ब्राह्मणोंको हिंसा के लिये एक मुख है छाप हिंसा प्रवर्शक हैं आपको पद्ध मुख होना ही चाहिये। पद्धानन को खहिंसा भ मतलब ही क्या है, क्योंकि एक तो महापशु दूसरे पद्धानन, क्या साचरा का विपरीत राज्या नहीं हो सक्ता। पद्धाननजी छाप यह भी जानते होंगे कि जहां पद्धानन रहता है वहां शिकारी भी घूमते रहते हैं। पद्धानन को दिग्विजयो होते हुए भी शिकारी पर भ्यान अम्रस्य रखना चाहिये। इस संसार

जङ्गल में अनेक शिकारी घूम रहे हैं। आप तो नकली पद्भानम दिग्वजयी हैं, जो असली दशानन रावण खरदृष्णादि राचस दिग्वजयी थे, चत्रीके दो बचोंने उनकी भी शिकार खेल डाली और सत्यानाश कर दिया। श्रीरामजी ने कहा भा है कि "हम चत्री मृगया बन करहीं",तुम्हसे खल मृग खोजत फिरहीं दश" इति आरण्य कांड रामचरित मानस।

साधारण मैथिल ब्राह्मणों ने अपने ही लिये हिंसा श्रेय समसी, परन्तु अद्भुत उपाधि कारी पं० लूटन (लुट्टी) मा ने जगत कर्ता विष्णु भगवान के अपर भी डांका डाल दिया, और भगवान के लिये भी नित्य मत्स्य मांसार्पण की व्यवस्था दे डाली। आपने वास्तव में बड़ी ही शिकार मारी, आज तक यह वेदका ममें मिथिला के किसी धुरंधर विद्वाल को न सूमा। क्यों न हो आप के पांच मुँह में दस आंखें भी होंगी।

पंडितजी आप पंडितका स्वरूप पीछे छोड़ अपि आपका पंडित से विपरीत आचरण है (गीता ५ । १८)। आप सब कुछ ती पढ़ गये, यहां तक कर डाला कि दिग्विजयी और पछानन की उपाधि बनाली, परन्तु अपने को बन्धन से छुड़ाने का कोई प्रन्थ नहीं पढ़े, और लिखा भी आपके विषय में ऐसा ही है कि —

खुथाऽध्ययनेनात्र हद् वंघ करेण च । पित्रवच्यं तदेवाशु मोचयेद्भव वंघनात् ५२ । इति देवी भागवत स्कन्ध १ ऋध्याय १४। और

श्रधीत्य चतुरो वेदान्सर्व शास्त्राण्यनेकशः। ब्रह्मतत्वं न जानाति दवी पाकरसं यथा ६५। इति मुक्तिकोपनिषद् श्रध्याय २।

मनुस्मृति अध्याय १२ श्लोक १२४ - ब्रह्माभ्येति परंपदम्, इसके योग्य नहीं हुए !! इसी प्रकार आंखों में धूल भोंक पञ्जानन जी दिग्यिजयी बनते हैं।

वैष्णवानन्य तुलसीदासजी के मानसका कनीयस् पीयूष यथाः—

परिहत सिरिस धर्म निहें भाई, पर पीड़ा सम निहें अधिमाई नर सरीर धरि जे पर पीरा, करिहें ते सहिहें महामत्र भीरा करिहें मोक वस नर अब नाना, स्वारध रत परलीक नसाना ४१। पर उपकार दलन मन काया, संत सहज सुभाव खगराबा संत सहिहें दुख परिहत लागी, पर दुख हेतु असंत अभागी १२६। हति मानस उत्तर कांड।

समयानुकूल जैसा होना चाहिये वास्तव में ऐसा ही है

षथाः -

मत्स्यामिषेण नीवंति दृहंतश्चाष्य जीविकाम्।
धोरे किलियुने विम सन्दें पाप रता जनाः ४० ।
वृथाहंकार दुष्टाश्च सत्य दीनाश्च पंहिताः ३१ ।
सूद्र तुरुवा भविष्यंति सन्दें पर्णाः कलोयुने ।
उत्तरानोतां यांति न चाश्चोत्तमतां तथा ३६ ।
हति नारदीय पुराण पूर्वस्वंह स्राच्याय ४१ ।

अधिक लिखना अधिक है विचार शील विज्ञ पुरुषों के लिखे यही अलम् हैं — भर्राजी ने नीति शतक में कहा भी है कि —

श्रज्ञः सुखमाराध्यः सुखतरमाराध्यते विशेषज्ञः ।
ज्ञान त्व दुर्विदग्धं ब्रह्मापि तं नरं नरज्जयति ३।

वर्णाश्रम के धर्मको त्राह्मणों ने छेदन कर ही दिया, एक वैद्याव धर्म ही मनुष्यों के कल्याणार्थ बचा था सो राज्ञस मैथिल जाह्मणों ने इस पर भो डांका डार दिया।

हम आंख से देख रहे हैं कि पड़े लिखे जो विद्वान मैथिल बाह्यण हैं और मांस मछली को खाते हैं, वे गृद्धवत् हैं, जैसे गृद्ध आकाश में सबसे ऊपर रहता है और नीच से भी नीच सुदें पर गिरता है। मूर्ख मैथिल बाह्यण को मांस मछली खाने हैं वो सुवरवत् हैं, (विष्ठा को मछली खाती है और मछली को मथिल बाह्मण खाते हैं) जैसे सुवरको दाल भात दूध रोटी खानेको दो तब भी विष्ठा का खाना नहीं छोड़ता परन्तु यह भी ठीक है किसीने कहा है कि—

दोहा— उत्तम थल सेवें सुजन नीच नीच के बंस। सेवत गीध मसानको मानसरोवर हंस १। उत्तम को उत्तमु वहै चहै नीचको नीच। सुगना कोयल खात फल वंक मछली विच कीच २।

यह संसार का नियम है कि बड़े समुद्रवत और छोटे पोखर। वत होते हैं, परन्तु जिस मकार समुद्र का अपीने योग्य जल होता है और पोखरे का पीने योग्य जल होता है इतना दोनों में अन्तर जानो । आशय यह है कि जितने छोटे होते हैं उतना ही छोटा अभर्भ करते हैं।

नोट-" मैंने सुना हैं कि मिथिला में वैष्णव विरकों के पुरोहित पूजा पाठ करानेवाले मैथिल ब्राह्मण ही हैं जो मांशासी (राष्ट्रस) हैं, और वह मैथिल अपने यजमान महन्तादिकों से नकली हिंसा कराते हैं। जैसे दशहरे आहि में कुम्हड़ा आदिका पशु बनाके काटना। यह वैष्णव यदि विद्वान् होते और विचार शील होते तोऐसाक्वों होता। (मेरा बनाया राममन्त्रार्थ देखेाजो कि

जिला मुजण्फरपूर, मु० पो० चुरोत में पं० पुरुषीत्तमदास जी के पास मिलेगा) क्या नकली पशु मारन हिंसा नहीं है, यदि हिंसा नहीं है तो फिर नकली पशु क्यों काटते हैं, क्या ५ वर्ष के बच्चे हैं जो खेल करते हैं। नकली पशु काटने का मतलब क्याहै। एक तो अवैष्णव को छूना वाँ उसके हाथका खाना, उससे बात चीत करना, प्रणाम करना निंदनीय है (पृष्ठ ११८-११९ में देखों श्रीर १२५पृष्टमें ९३ रत्नोक देखा। दूसरे मांस खानेवाला महापापी होता है (पृष्ठ ७४ देखों)। तीसरे जो बाह्यण हिंसक है वह अधर्मी हैं (आगे अधर्मी ब्राह्मण के लक्षण में देखों)। चौथे अवैष्णव ब्राह्मण नीच होता है (अवैष्णव ब्राह्मण नीच होता है में आगे देखो)। उक्त चारों वातें मैथिल ब्राह्मणों में दिखाती हैं। फिर उनको अपना पुरोहित कनाना अति ही निन्दनीय है। मांशासी मैथिल त्राह्मणों को दान देना (११६-११७ पेज देखो) विद्या पढ़ाना इत्यादि अपने परलोक का नाश करना है, सर्प को दृष पिलाने सं बह जहर होजाता है जैसे जानो । यह वैदण्व धर्म के मत से बाहिर है और अशोभित है। वैष्णव विरक्तों को इस पर अवश्य **म्यान देना चाहिये।**"

यदि कोई वेद शास से हिंसा की विधि बतावें तो उसे सत्यन माने, क्यों कि पहिले हिंसा तो कोई धर्में नहींहै,दूसरे मांसा हा-

रिखों का हिंसा धर्म बताना घोखा देना है। कील (बाममाणी) धर्मवालों ने वेद शास्त्र सूत्र पुराण रामायण महाभारतादि प्रन्थों में हिंसा मिलाई है। यहाँ तक अभइय और जीव हत्या की विशेता परडाली है. कि जब हम वेद और धर्म शास्त्रादि प्रन्थोंको हाथ में लेकर पढ़ने लगते हैं, उस वक्त हमका ऐसा प्रतीत होता है कि हम वृचङ्खाने (कसाई खाना) में बैठे हैं और सब प्रकार के जानवर पत्ती आदिकों के मारने खाने का निर्णय कर रहे हैं। वहं दुख की बात है कि यदि मूर्छ अभस्य भइण और जीव इत्या को धर्म माने तो अले ही माने, परन्तु विद्वान कैसे इसको धर्म मानते हें हम नहीं जानते । क्या विधि (यज्ञादि) से मारने में पशु को सुख होता है स्त्रीर को यह चाहता है कि मुक्ते विधि से मारें। पशु को विधि वा वे विधि से किसी प्रकार भी मारो दुख ही होगा। किसी जीव को दुख न देने को ही धर्म कहते हैं, इसी वास्ते धर्म प्रन्थ वने हैं, कर्म काण्ड में यम में पहिले अहिंसा शब्द क्यों श्राया है इस पर विचार करो । श्रीर श्रपने दुख सुख से दूसरे जीवधारियों का दुख सुख सममलो। श्रहिंसा से सुन्दर रूप अगों की छुडोलता आयु बुद्धि सत्य; वल स्मृति सज्जवनना श्रादि प्राप्त होते हैं, देखो महाभारत अनुशासन पर्व अध्याय ११५ रलोक ८ ।

जो श्वात्मा देवी देवताकों में है वही श्वात्मा खस्सी मछली श्वादि सब शरीरों में है, एक जीव के खाने वाले, दूसरे जीव को ही पापी कहते हैं। इस लिये धर्म्मवान पुरुष देवी देवताश्चोंकी ही बहीं किन्तु जंतु मात्र की पूजा करें यथाः—

सर्वत्र पूज्यते जन्तुर्धर्भवात्रात्र संश्वयः ३८। इति नारदीय पुराण पूर्वभाग घण्याय ३१।

यदि आप खस्सी मछली आहि की पूजा नहीं कर सक्ते तो उसे महाद्ग् भी न दीजिये। मनुष्यमात्र को चाहिये किसी को पालै न तो मारे भी न। देवी की पूजा अन्न फल फूल से अच्छी तरह हो सक्ती है (देखो पृष्ठ १९ में ८५ रखोक से) मारवाड़ जज अन्देलखण्ड मालवा गुजरात आदि देशों के लोग इसी प्रकार से पूजा करते ही हैं। और विहार बङ्गाल उड़ीसा आदि देशों के लोगों से विशेष रूपवान बलवान ऐश्वर्ण्यवान द्यावान भर्मवान और जीवदान वाले होते हैं। यदि आप किसी जीव को देवी या स्त्र वाजा सो सामान्यता काट कर भन्नण करेंगे तो विष्कु को काट के भन्नण करने में क्या संदेह है। और क्या फिर इससे आपकी गित हो सक्ती है। और क्या इसको वामाचार न कहेंगे! जो धर्मा प्रन्थों में स्पष्ट है यथाः—

वदिकामादि दुष्टात्मा देव + पूजा परो भवेत्। दंभाचार स विद्येयः सर्वे पातिकभिः समः ३९। इति नारदीय पुराण पूर्वभाग अध्याय ३३।

पाखरड शब्द का ऋर्थ देखा "देवी बिल पाखरड" मैं। गीता ३। ६ भी देखा। पं० लूटन का ऋभिप्राय विष्णु के भक्त होने पर नहीं है यह एक प्रकार का विष्णु भगवान का उपहास करना हैं, लूटन कट्टर शाक्त जीवहत्यारा और मांस भन्नी है।

श्चाप जो देवी को पशु बिल देते हैं उस हत्या का फल देवी नहीं भोगेगी, क्योंकि धर्मशास्त्र मनुष्यों को ही बने हैं (इत्येतन्मा नवंशास्त्र मनु १२।१२६) वह हत्या कर्म बिना भोगे आपका छुटकारा नहीं होगा यथाः—

> अवश्यमेव भोक्तब्यं कर्मणां हाक्षयं फलम्। नाभक्तं क्षीयते कर्मे कल्प कोटिशतेरिप ६९। इति नारदीय पुराण पूर्वभाग अध्याय ३१।

यदि श्राप गृहस्थ वैष्णव होंगे तब भी सब जीवों का हित चाहते हुए विष्णु को पूजा करना पड़ेगा यथा —

⁺ विष्णु।

कर्मणा मनसा वाचा सर्व लोक हिते रतः। समर्चयित देवेशं क्रियायोगः स उच्यते ४२।

इति नारदीय पुरासा पूर्वभाग श्रध्याय ३३।

गृहस्थ अपने धर्म को दया से युक्त करें (गृहस्थस्तु दया युक्तो धर्ममेवानु चिन्तयेत् ४२ इति पाराशर समृति अध्याय १२, पृष्ठ १३ में २३ श्लोक भी देखा)। अतएव विष्णु की मत्स्य मांस का भन्नण कराना इन्द्रीं लोलुपता श्रीर पाखरड श्रवश्य है। लघुकौ मुदी पुनः सिद्धान्तकौ मुदी उणादि के प्रथम सृत्र (कृवापाजिमिस्वदिसाध्यश्भ्यउग्) की व्याख्या में लिखा है कि "साध्नोति परकार्यमिति साधुः" श्रौर साधु के पर्य्याय वाची शब्द अमरकोष ब्रह्मवर्ग श्लोक ३ में इस प्रकार आये हैं कि - "महाकुल कलीनार्य सभ्य धजन साधवः"। इस प्रमाण से आप जीवों के कार्य साधने वाले नहीं हुए, किन्तु उनके प्राणः धालक हुए और चुदुकुल अकुलीन अनार्य (म्लेच्छ) असभ्य असजन और असाधु में आप की गणना हुई, और वास्तव में दही ठीक है। साधु अभद्य नहीं खाते श्रीर निर्दयी नहीं होते साधु सतासत के विचार में प्रवीण हाते हैं। भला ऐसा कोई कहैगा कि साधू खस्सी और मछली को खाते हैं।

बकरी



अब आप यह बताइये कि इस बकरी में क्या चीज अच्छी है, इसका मुँह अच्छा है या पैर अच्छे हैं या पेट अच्छा है, सब में मल ही मल तो भरा है छी! छी!! इसी के बच्चे को खाजाते हो, तुमको इसके काटने में दबा नहीं आती। जो बकरी के बच्चे को काटते हैं या मांस मोल लेकर खाते हैं, उन्हें भी यमपुरी में यमदुत मारकाट के खाते हैं।

जिस प्रकार मनुष्यों के शरीर १२ मलों से बने हैं, इसी प्रकार खस्सी आदि जानवरों के शरीर भी १२ मलों से बने हैं १ देह को चिकनई २ बीर्य ३ रुधिर ४ शिर के भीतर का गूदा ५ मूत्र ६ विष्टा ७ नाक का मौल ८ कान का मैल ९ कफ १० आश्रु ११ आंखों का कीचर १२ पश्लीना। देखो मैत्रायरपुपनिषद् प्रपाठक १ श्रुति २ । मनुस्मृति अध्याय ५ रह्लोक १३५ और अध्याय ६ स्लोक ७६। अत्रि स्मृति श्र्लोक ३१ ।

चकरी बचा कहत है मैं श्रिल से हूँ दीन ।
चाहै मारो छोड़ दो यह तुमरे आधीन।
वह तुमरे आधीन आप हैं विप्र द्यालू।
मेरा है अपराध कवन! हूँ रौरे पालू।
वालक सम निज प्यार करो! क्यों काटो अतरी।
रो रो के मर जाय! माय मेरी यह बकरी १।
मछली



भला यह तो बताश्रो कि जो यह मछली पानी में रहती हैं आपकी पृथ्वी से कोई संबंध नहीं रखती इसे क्यों खाजाते हो यह कितनी बड़ी दीन है, न किसी को मारती न डांटती। श्रीर इसमें कौनसी चीज अच्छी है. ये विष्टा धृक खखार मुर्दा, मरे पहा गाय बैत सुवरादि के मांस की खाजाती है और इसे आप खाजाते हैं, इससे तो आप मछली से ज्यादा वो अकल हैं क्या कि मछली को विष्टा आदि खाने का ज्ञान नहीं है और आप को तो ज्ञान है—अब तो भला मछली खाना छोड़ दोजिये और इस ब्राह्मण धर्ममें लात न मारिये किन्तु ब्राह्मणाधर्म में लात मारिये। जात ब्राह्मण, कर्म म्लेच्छ का।

खस्मी पुखरा तीर पर चरता ! कहती मीन ।
हम तुम दोनों जगत में हैं करमन के हीन ।
हैं करमन के हीन दीन दुनियां में कोई ।
सुनता नहीं पुकार गुजारा कैसे होई।
मैथिल डड़िया देश श्रीर पूरव वंगाला।
हमरे तुमरे शत्र नीच हैं ये कंगाला २।

श्रात श्रल्प प्रत्यच्च में मांस खाने के शरीर का बलाबल बताते हैं। यदि मांस खाने से मगज में ताकत होती है और मगज
जोरदार होता है श्रकल बढ़ती है तो बिल्ली कुत्ते गीदड़ादि
क्यों नहीं मिडिल पास कर लेते, और विहार बङ्गाल उड़ीसा
स्थां नहीं मिडिल पास कर लेते, और विहार बङ्गाल उड़ीसा
श्रादि देशों में क्यों मांस खाने बाले बहुत लोग वे श्रकल श्रीर
श्रादि देशों में क्यों मांस खाने बाले बहुत लोग वे श्रकल श्रीर
मूर्ख हैं। यदि मांस खाने से शरीर में बल होता है तो मांस खाने
बाले देशों के मनुष्य मांस खाते हुये क्यों श्रवल होते हैं, जैसे
बङ्गाल उड़ीसा श्रादि । श्रीर बुन्देलखराड मालवा मारवाड़ ब्रजादि
बङ्गाल उड़ीसा श्रादि । श्रीर बुन्देलखराड मालवा मारवाड़ ब्रजादि
देशों के लोग मांस नहीं खाते दूध दही घी मेवा मिठाई फल फुल
कन्द श्रीर श्रव्र खाते हैं मांस बिलकुल नहीं खाते वो क्यों बल
कन्द श्रीर श्रव्र खाते हैं मांस बिलकुल नहीं खाते वो क्यों बल
बान होते हैं। यांने यहां तक बलवान होते हैं कि इन देशों का
एक २ श्रादमी भी बङ्गाल उड़ीसा के दश २ पांच २ श्रादमियों
को मार सक्ता है। फल फूल वास पात खाने वाले हनूमान ने

लङ्का में मांस खानेवाले राचसों का क्यों अत्यन्ताभाव कर डाला। मांस खाने वालों से अन्न फल फूल घासादि खाने वालों को विशे व गुस्सा आती है और फिर उनकी गुस्सा को कोई रोक नहीं सक्ता क्यों कि वो वार२ हिंसा नहीं करते -जैसे हनूमान कृष्णादि। श्री कृष्ण चन्द्र जी ने घर के दूध दही के खाने के अप्तावा शौक से बस्ती का भी दूध दही मक्खन घी मिश्री खाया, तथापि चन्होंने मांस कभी नहीं खाया, परन्तु मांश खानेवाले दैत्यों का सत्यानाश कर डाला। इस वक्त भी मथुरिया चौबे जो श्रम दूध घी मेवा सिटाई फल फूल खाते हैं वो मांस खाते वाली को पछाड़ते हैं। अन्न घास खाने वाले दो बैल जिस गाड़ी को सींच सक्ते हैं उसे मांस भन्नी चार या छः शेर नहीं खोंच सक्ते। पदि मांस खाने वाले श्रिधिक साहसी होते हैं श्रीर वीर होते हैं, सो बाघ तिदुंवा भेड़िया मांस खाते हैं, श्रीर गैंड़ा भैंसा सुवरादि जो घास पात खाते हैं इन्हें देख क्यों दुम दवा कर भाग जाते हैं और कभो सामना भी नहीं करसक्ते। अधिकांश भांड भड़्ना रंडी हीजड़ा महिरा ढीमर खटीक कसाई गन्दे मांस मछली ऋडे आदि खाते हैं फिर इनमें क्या साहस और वीरता आजाती है।

मांस में सौ भाग में केवल छत्तीस भाग वह सत रहता है जिससे मनुष्य पुष्ट रहता है शेष चौसठ भाग पानी रहताहै, श्रीर अन्न में नव्दे भाग वह सत रहता है कि जिससे मनुष्य पुष्ट होता है, शेष दश भाग पानी रहता है इसी प्रकार फल फूल पत्ते आ-दिकों का हाल जानो।

बनस्पति और मांस खानेवालों की पहिचान यथाः—

१ बनस्पित और मांस खानेवालों में बड़ी भारी पहिचान यह है कि, बनस्पित खानेवाले रात को स्रोते और आराम में बिताते हैं, और मांसाहारी रात को जाग कर शिकार खेलते वा पशुवों को मार कर खाते हैं इसिलये मनुष्य भांसाहारी नहीं है

२ दूसरी पहिचान यह है कि मनुष्य के शरीर से और बनस्पति खानेवालों के शरीर से पसीना निकलता है, और मांस-भन्नी पशुश्रों के शरीर से पसीना नहीं निकलता इससे मनुष्य बनस्पति खानेवालों में हैं, मांस खानेवालों में नहीं हैं।

३ तीसरी पहिचान यह है कि मनुष्य और बनस्पतिखाने-वाले पशु घूंट से पानी पीते हैं और मांस खानेवाले पशु जीम से चप चप करके पानी पीते हैं, इस वास्ते मनुष्य मांस खानेवालों में नहीं है।

४ चौथी पहिचान यह है कि मनुष्य, और बनस्पति खाने-बाले पशु सरल स्वभाव होकर बहुधा किसीको नहीं सताते और मांस खानेवाले पशु नित्य ही क्रूर स्वभाव के होते हुये दूसरे की मारने का विचार करते रहते हैं, यहां तक कि कभी २ अपने वचीं को भी खाजाते हैं इसवास्ते मतुष्य बनस्पति खानेवालों में हैं, मांस खानेवालों में नहीं है।

५ पांचवीं पहिचान यह है कि आदमी के दांतोंकी बनावट बनस्पित खानेवालों कैसी चवाने को होती है, मांसाहारी शेर कुत्ता के दांतों कैसी नहीं होती, इसिलये मनुष्य बनस्पित खाने-बालों में है।

निर्दयी जीव हत्यारे मांस खानेवाले ही पिशाच म्ले कह श्रौर कसाई कहे जाते हैं, पिशाच म्लेच्छ श्रौर कसाइयों के शिर पर कहीं सींग नहीं जगते।

ब्राह्मस्तव निष्फल यथाः—

चक्र खांद्धन हीनस्य विपत्वं निष्फर्लं भवेत् ६। इति पाराशरीय धर्मशास्त्र उत्तरखरह।

अबैद्याव बाह्यमा नीच होता है यथा:-

अवक्रयारी विषस्तु सर्व कर्म सु गर्हितः। अवैष्णवः + समापन्नो नरकं चाधि गरछति २९।

+ राजा प्राचीनवर्हि का वैष्णव धर्मसे ही कल्याण हुआ था

चकादि चिन्ह रहितं पाकृतं कलुवान्त्रितम्। अवैष्णव तु तं द्राच्छ गकमिव संत्यनेत् ३० अवैष्णवस्तु यो विषः स्वपाकाद्धमः स्मृतः। अश्राद्धेयो हापाङ्केयो रौरवं नरकं बजेत् ३१। अवैष्णवस्तु यो विषः सर्वे कर्म युतो ऽ पिवा। स पाखंडेति विज्ञेयः सर्वे कर्म सु नाईति ३२। तस्पाचकं विधानेन तप्तं वै धारयेद्विजः। सर्वाश्रमेषु वसतां स्त्रीणां च श्रुति चोदनात् ३३।

इति वृद्धहारीतस्मृति धर्मशास्त्र आध्याय २

नोट - ब्रह्ट्ब्रह्म संहिता पाद २ अध्याय २ ऋोक १०२ से १०५ तक और पाद १ अध्याय ५ ऋोक ८ पुनः श्लोक ४४ से ९७ तक देखो।

यथाः--

राजा प्राचीनवहिंश्च वभूव मख कारकः १। नारदस्योपदेशेन त्यक्त्वा हिंसा मयं मखम्। ज्ञानवान वैष्ण्वो भूत्वा दश पुत्रानजीजनत् २। इति भविष्य पुराण प्रतिसर्गपर्वे श्रध्याय १६।

इन दोनों श्लोकों से यही पाया गया कि मांस खाने वालों के पुत्र नहीं होते, यदि होते ही हैं तो अन्तमें सर्वनाश हो जाते हैं।

नाह्मण का लच्या यथाः -- +

क्षवा दया च विज्ञानं सत्यश्चेष दमः शमः । अध्यातम निरत ज्ञानमेतद्वशासण लक्षणम् २७ । इति कूर्म पुराण उत्तरार्द्ध अध्याय १५ ।

नोट — ज्ञान विज्ञान अध्यात्म निरत यही ब्राह्मणका लच्चण है याने ब्रह्म को जानना, और वेद प्रयोजन मात्र ही रह जाता है (गीता २। ४६) भैरों भूत भवानी शिवादि की उपासना करना यह ब्राह्मण का लच्चण नहीं है। वेदान्त को जानने वाला उत्तम ब्राह्मण होता है।

⁺ धर्म का लक्ष्ण-देखो मनुस्मृति अध्याय २ श्लोक १२, अध्याय ६ श्लोक ९२। याज्ञवल्क्यस्मृति अध्याय १ श्लोक ६, अध्याय ३ श्लोक ६६। महाभारत शांतिपर्व राजधर्म अध्याय ३६ श्लोक १०, अनुशासनपर्व अध्याय ११४ श्लोक २। नारद परि वाजकोपनिषद उपदेश ३ श्रुति२४। धर्म का मूल-देखो मनुस्मृति अध्याय २ श्लोक ६। याज्ञवल्क्यस्मृति अध्याय १ श्लोक ७। धर्म किसको कहते हैं - देखो वैशेषिकदर्शन अध्याय १ आहिक १ सूत्र २। वशिष्ठधर्मसूत्र अध्याय १ सूत्र ४। वशिष्ठसमृति अध्याय १ श्लोक ३।

तथा—

वोगस्तपो दमो दानं सत्यं शौचं दया श्रुतम् । विद्याविज्ञानमास्तिक्यमेतद्भवाह्मण लक्षणम् २१। इति वशिष्ठ स्मृति अध्याय ६।

त्राह्मण शब्द का अर्थ यथाः— कर्मणा वाघं सद्घुष्टया करोति त्रह्मभावनाम् । स्वधर्म निरतः सुद्धस्तस्मादृत्राह्मण उच्यते ७० । इति त्रह्मवैवर्त पुराण गणपतिस्तंद अध्याय ३०।

नोट — ब्रह्म की उपासना करना ही ब्राह्मण का अर्थ होता है। ब्राह्मणों के ही दोष से प्रजा को पीड़ा होती है। क्था: —

विवाणां कर्म दोषेस्तैः प्रजानां जायते भयम्। हिंसा मनस्तथेष्ये च क्रोथो ऽसूया ऽक्षमा ऽ धृति ३६। इति मत्स्यपुराण अध्याय १४४

तथा--

दुरिष्टेर्द्घी तेश्च दुष्क्रतेश्च दुरागमेः। विमाणां कर्म दोषेस्तैः प्रजानां जायते भयम् ३६। इति ब्रह्माण्डषुराण पूर्वभाग अनुषंगपाद अध्याय ३१। नाह्यणों का धन तपस्या है यथाः-

तयो धनं ब्राह्मणानां ७४। इति ब्रह्मवैवर्तपुराण गणपतिखंड अध्याय ३४।

ब्राह्मण के धारण करने योग्य यथाः—

दानं व्रतं ब्रह्मचर्य यथोक्तं ब्रह्म धारणम्। ×दमः मशांतता चैव भृतानां चानुकंपनम् १५। इति महाभारत आरबमेधिकपर्व अध्याय १८। अधर्मी ब्राह्मण्या का लक्षण यथाः—

अधर्माचरणो विषा हिंसा चाशुभ लक्षणम् ५। इति कूर्मपुराण पूर्वार्द्ध अध्याय ८।

× ब्रह्मवैवर्तपुराण प्रकृतिखंड द्याध्याय ३० श्लोक २११ से २१४ तक में लिखा है कि नारायणचेत्र (तीर्थ), कुरुदोत्र, विष्णु-कांची, काशी, बदरीनारायण,गङ्गासागर, पुष्कर, भास्कर,प्रभास, रासमण्डल, हरिद्वार,केदार, सोम, बदर, सरस्वतीनदीके किनारे, वृन्दावन के वन में, गोदावरी नदी के किनारे, कौशिकी नदी के किनारे, त्रिवेनी (प्रयाग) में, हिमालय में, श्रीर भी संसार भर में जितने तीर्थ हैं, कोई भी तीर्थमें जो मनुष्य दान लेगा तो वह दान लेगेवाला कुंभी पाक नरक में पड़ेगा। ९० प्रष्ठ की टिष्पणी में ३५ श्लोक देखे।

नोट — उक्त श्लोक से हिंसा करता ही अधर्मी ब्राह्मण का लक्षण है। तो ब्राह्मण हिंसा क्यों करते हैं। बैलों को बिंधया करना कराना और उनको नाथना यह भी बड़ी हिंसा है — जो बैलों को बिंधया करते और नाथते हैं वे लोग महानिर्द्यी और पापिष्ठात्मा होते हैं यथाः —

येचिच्छिद्रन्ति दृषणान् येच भिंदन्ति नास्तकान् । वहंति गहतो भारान् वध्नन्ति द्मयन्ति च ३७ । हत्वा संत्वानि खादन्ति तान् कृथं न विगहेसे ३८ । इति महाभारत शांति पर्व मोच्चमे श्रध्याय ५९ ।

वंधकाश्च पश्चनां येते वै निरय गामिनः ७९ ।
तद्दीका नीलकंठी-पश्चनां युगेन गोएया अएड मर्दनैन वा वल वीर्य योनीशिका अनाप्तदग्रकाः ७९ ।
इति महाभारत अनुशासन पर्व अध्याय २३ । पृष्ठ ४९ श्लोक
३३-३४, पृष्ठ ५९ श्लोक ३३ से ३५ तक भी देखे। ।
धर्म का साधन यथाः—

त्र्यहिंसा सत्यमस्तेयं शौचिमिन्द्रिय निग्रहः । दानं दया दमः क्षान्ति सर्वेषां धर्म साधनम् १२२ इति याज्ञवल्क्यस्मृति ऋष्याय १। तथा-

श्रथाहिंसा द्या सत्यं हीः श्रद्धेंद्रिय सयमः । दानिष्धं तपोध्यानं दशकं धर्म साधनम् ३४ । इति भविष्यपुराण त्राह्मपर्वे श्रध्याय १८९ ।

तथा च-

परित्यजेदर्थकामौ यौ स्यातां धर्मवर्जितौ । धर्मचाप्यसुखोदकं लोकविक्रुष्टमेव च १७६। १७८ रलांक भी देखो।

इति मनुस्मृति अध्याय ४।

सन्मतनधर्म का सूल यथाः—

श्रद्रोहश्राप्यलोभाश्र तपो भूत दया दमः ३७। त्रह्मचर्यं तथा सत्यमनुक्रोशः क्षमा घृतिः। सनातनस्य धर्मस्य मृलमेतदुरासदम् ३८। इति त्रह्याण्डपुराण् पूर्वभाग श्रनुषंगपाद श्रध्याय ३०

समातनधर्म यथाः-

अवध्यः सर्वे भूतानामहमेकः सनातनः १८। इति महाभारत आश्वमेधिकपर्वे अध्याय १३।

नोट — इसी पर्व के अध्याय १८ में श्लोक १५ से २० तक में देखो बाह्मण का सनातनधर्म। स्वराज्य पाने योग्य मनुष्य यथाः—
 सर्वभूतेषु चात्मानं सर्वभूतानि चात्मिनि ।
 समं पश्यन्नात्मयाजी स्वराज्यमधिगच्छति ९१।
 इति मनुस्मृति अध्याय १२।

चौदह भुवन एक पित होई, भूत द्रोह तिष्ठई निह सोई ३८। इति रामचरितमानस सुन्दरकांड ।

मनुष्य के कल्याण के बड़े भारी साधक यथाः— वेदाभ्यासतपो ज्ञानमिन्द्रियाणां च संयमः । श्रहिंसा गुरुसेवा च निःश्वेयस करं परम् ८३ ।

इति मनुस्मृति अध्याय १२।

नोट-ब्राह्मण के कल्याण करनेवाले, श्लोक १०४ देखो। श्रोर श्लोक ९२। ९३ भी देखो।

भरतोक के देनेवाले यथाः— श्रिहिंसा सत्यगस्तेयं शौचिमिन्द्रिय संयगः। दानं दया च क्षांतिश्र ब्रह्मचर्यममानिता २।

^{*} मुखी प्रजा जनु पाय सुराजा २३५ । । जनु सुराज मंगल वहुँ श्रोरा २३६ ।

शुभा सत्या च मधुरा वांङ् नित्यंसिक्तियारितः । सदाचार निषेतित्वं परलोक प्रदायकाः ३ । इति वामनपुराण अध्याय १५।

न द्या के समान दूसरा पुण्य है श्रौर न हिंसा के समान दूसरा पाप है यथा:—

दया समं नास्ति पुरायं पापं हिंसा समं नहिं ३९ । इति देवीभागवत स्कंघ ७ अध्याय १६।

देशा के बराबर संसार में दूसरा धर्म नहीं है यथाः—

न धर्मस्तु द्या तुरुषो १८।

इति नारदीय पुराण उत्तरखण्ड अध्याय २२।

त्तारने योग्य ब्राह्मण यथाः— ये शान्तदान्ताः श्रुति पूर्ण कर्णाः,

जितेन्द्रियाः प्राणि वधानिष्टताः । प्रतिम्रहे सङ्कृचिता ग्रहस्तास्,

ते ब्राह्मणास्तारियतुं समर्थाः २२ । इति वशिष्ठ स्मृति अध्याय ६।

नोट-"धर्म की इच्छा वाले द्विज शिखा छोड़ अपने शरीरके

सब बालों का मुंडन करावें क्योंकि जो कुछ पाप किया जाता है वह सब बालों में टिकता है। (यिक्जिनिक्जियते पापं सर्वें केरोषु तिष्ठति ५५। इति पाराशरस्मृति श्रध्याय ९)।"

चांडाल त्राह्मण यथाः-

निर्द्यः सर्व भृतेषु विप्रश्वाषडात्त उच्यते ३८० । इति अजिस्मृति ।

नोट—'इसी अत्रिस्मृति के ३०० रलोक में लिखा है कि जो ब्राह्मण सदा मछली मांस खाता है उसको निषाद कहते हैं। और निपाद को रवपच और चांडाल कहते हैं, देखो अमरकोष तृतीय कांड शृद्धवर्ग रलोक १९-२०।"

> श्राह्वायका देवलका नाक्षत्रा ग्रामयाजकाः। एते त्राह्मण चागडाला महापथिक पंचमाः ६।

> > इति महाभारत शान्तिपर्व राजधर्म अध्याय ७६।

श्चर्थ—धर्माधिकारी, मासिक लेकर देवता की पूजा करने वाला, ज्योतिषी, प्रामयाजक अर्थात् मतुष्यों को यज्ञ कराने वाला, श्चीर महापथिक अर्थात् समुद्र की राह नौका से जाना वा मार्ग का कर लेनेवाला, यह पांचों शक्किण चा्ग्डाल कहाते हैं ६। पृष्ठ ५४ में नोट का ११२ खोक देखे। और ११७ पृष्ठ में १० रजोक देखे।

प्रश्न—''बुँ देलखंड के चमार मरे पशु को खाते हैं और मिथिला के बाह्य जीते पशु को खाते हैं, दोनों में कौन श्रेष्ठ है।"

ब्रह्मतत्वं न जानाति ब्रह्मसूत्रेण गर्वितः । तेनैव स च पापेन विषः पशु उदाहृतः ३०९ । इति अत्रिस्मृति ।

मांस खाने वाले को दया नहीं होती यथाः— 🦠 🦠

नो दया गांस भोजिनः ५। 🗴

इति चाग्यक्य नीति अध्याय ११।

मांस! लकड़ी पत्थर घासादि से पैदा नहीं होता, किंतु किसी जीव की देह काटने से मांस निकलता है। इसी से इसके खाने में पाप लगता है, तुम अपनी देह काट के जान सक्ते हो कि

दया दान परोनित्यं जीवमेव प्ररच्येत्
 चारडालो ऽ प्यथ शृद्रो वा स वै ब्राह्मग् उच्यते ४३।
 इति पद्मपुराण भूमिखराड द्याध्याय ३७।

जानवरों की देह काटनेसे उन्हें कुछ दुख होताहै या नहीं — इसी वास्ते मांस खाना मना किया है। यदि मांस खाने वाला न होगा तो मारने वाला भी न होगा, क्यों कि मांस खाने वाले को ही भारनेवाला जानवर मारता है यथा: —

> ब्रहत्वा च कुतो मांसमेवमेतद्विरुद्ध्यते २। निर्ह मांस तृणात् काष्टादुपलाद्वापि जायते। इत्वा जतुं ततो मांसं तस्पदोषस्तु भक्षणे २६। यदि चेत्खादको न स्यान्न तदा घातको भवेत्।

तथैवात्मा परस्तद्वद्द्रष्टयः सुखिमच्छता।

 सुख दुःखानि तुल्यानि यथात्मिन तथा परे २१।

 सुखं वा यदि वा दुःखं यत्किचित्कियते परे।

 यत्कृतं तु पुनः पश्चात्सर्वमात्मिन तक्क्वेत् २२।

 इति द्चस्मृति अध्याय ३।

 द्या समंनास्ति पुग्यं पापं हिंसा समंनिह ३९।

 इति देवी भागवत स्कंघ ७ अध्याय १६।

 द्या का स्वरूप—देखो अत्रिक्मृति श्लोक ४१। शांडिल्योपनिषत् अध्याय १ श्रुति १। श्रीजावालदर्शनोपनिषत् सग्ड १

श्रुति १५।

घातकः खादकार्थाय तद्धातयति वे नराः ३१ ।ऽ इति महाभारत अनुशासन पर्व अध्याय ११५ ।

S वैष्णुवों को भी ध्यान देना चाहिये कि मृगछाला, बाधम्बर, चवर, शंक. श्ररघा, नौबतमढ़ाना, मंधु, गोरोचन, कस्तूरी, इत्यादि ये हिंसा कराने वाली और मल वस्तुयें हैं-इन को त्याग दें। यह सब तामसी लोगों के योग्य हैं यह वस्तुयें न मोच प्रद हैं न स्वर्ग प्रद हैं किन्तु जीवों का बदला देने को नरक में जरूर जाना पड़ैगा। श्रीर चौरासी लाख योनियों में नम्बर वार घृमना पड़ेगा। तुम्हारे ही वास्ते दुष्ट लोग मृगादि पशुष्रों की हिंसा करते हैं। तुम्हारे ही बास्ते हिंसक! सुरहगौबों की पूछें काटते हैं जिनका चवर बनता है जो सूखा मांस ठाकुर के सिर पर हलाते हो छौर वहीं पर भोजन की वस्तुयें रहती हैं किन्तु दाल भात का थार वहीं रखा जाता है। शङ्ख खरघा ये हड्डी ही है जो उसी हाथ से भोजन की वस्तुयें उसी हाथ से अवी पकड़ना। मुदें को फेंक के हड़ी के अर्घे के जल से पवित्र होना आश्चर्य है क्या आपवित्र से आपवित्र पवित्र हो सक्ता है ? मधु के साथ मांस खाने में ब्राता ही है सो ठाकुर पूजा में काम लाते हैं, मधु खानेवाले मक्खियों का मांस, खाते ही हैं, श्रीर फिर मल खाना कोई अच्छी बात है। क्योंकि १४ मलों से जीवों के शरीर बने हैं—ये सब दुर्गन्ध वाले अगुद्ध मल कहाते हैं। मैत्रायण्युपनिषद् प्रपाठक १ श्रुति २ में लिखाहै कि है भगवन्! हड्डी १ चर्म २ नस ३ चर्बी ४ मांस ५ वीर्य ६ लोहू ७ कफरोग ८ आंसू ९ विष्ठा १० मृत्र ११ बात १२ पित्त १३ कफ १४ ऐसे दुर्गन्धित असार शरीर में मनुष्य कैसे काम भोग की इच्छा करता है। पृष्ठ १७८ भी देखो।

इस से मांस खाने में महादोष (महापाप) है क्यों कि यह बीर्य से पैदा होता है इसको न खाना ही पुख्य है यथाः—

> शुक्राच तात संभृतिर्भासस्य ह न संशयः। भक्षणे तु महान् दोषो निवृत्त्या पुरायमुन्यते १३। इति महाभारत अनुशासनपर्व अध्याय ११६।

इसी प्रकार सब की जानों, मधु के बिषय में पृष्ठ २० पंक्ति १४, पृष्ठ ६९ पंक्ति ६ से आगे देखो । उक्त बस्तुयें उसी बेद शास्त्र में लिखी हैं कि जिस बेद शास्त्र में पशु आदिकों का काटना और मांस खाना लिखा है, और बेद तामसी आदि तीनों गुणों से भरा ही है (गीता २। ४५) इससे तुमको सात्विक गुण गृहण करना ही लाभ प्रद है। यह मनुष्य लाक केला के खम्भ के समान भीतर पोला है, जो इसमें स्थिरता का खोज करते हैं वे मूर्ख हैं, क्योंकि यह तो पानी के बलवृले सरीखा है।

> मनुष्ये कदलीस्तर्नभिनिःसारे सारमार्गणम् । करोति यः स सम्मूढो जलबुद्धबुदसिन्नभे ८। इति याज्ञवल्क्यस्मृति श्रध्याय ३।

ब्राह्मण की ५ गति। यथा:--

ब्राह्मणः कर्म सन्यासा है राग्यात्मकृतेर्त्त्यम्। ज्ञानात्माञ्चोति कैवल्यं पञ्चता गतयः स्पृताः ३४। इति सत्स्यःपुराण अध्याय १४३।

नोट—"इन ५ गतियों से अतिरिक्त ब्राह्मण नरक को जाता है। शिखा यञ्चोपवीतादि ब्रह्मकर्म यतिस्त्यजेत् । स जीवन्नैव चा-एडालो सृतः श्वानो ऽ भिजायते ४७ इति बृद्धहारीतस्पृति, अध्याय =। चरेन्मधुकरीं वृत्तिमिष न्लेच्छ कुलाद्षि । एकान्नं नैवभोग्-तब्यं बृहस्पति समोयदि १९५९ इति अत्रिस्मृति ।"

मनुष्य जब तक अपने दुखं नहीं पाता तब तक दूसरे के दुखं का निश्चयं नहीं करता यथाः—
यावश्च सभते दुःसमात्मनो मानवं कचित्।

तावन्यस्य दुःखेन प्रतीति नाधि गच्छति ३२। ंइति आदि पुराण अध्याय २६।

इस संसार में चार प्रकार,के मनुष्य होते हैं-

१ श्रापने स्वार्थ को छोड़ परमार्थ करते हैं, वे शतपुरुष हैं। २ श्रापने स्वार्थ को लेके परमार्थ करते हैं. वे सामान्य हैं। ३ श्रापने स्वार्थ के बास्ते दूसरे का श्रार्थ नाश कर देना, वे राज्ञस हैं।

४ अपना भी स्वार्थ नहीं होता और निरर्थक दूसरे के हित.को भी नाश कर देते हैं; हम नहीं जानते कि वे कौनहैं यथाः—

एके सत्पुरुषाः परार्थघटकाः स्वार्थान्परित्यक्य ये। सामान्यास्तु परार्थमुद्यमभृतः स्वार्था ऽ विरोधेन ये। ते ऽभि मानव राक्षसाः परिहितं स्वार्थाय निघ्नन्ति ये। ये निघ्नति निर्थके परिहितं ते के न जानीमहे ७४।

इति भर्तु नीति शतक।

मांस खाने वालेको जो दान देता है वह महापापी होता है यथाःयथा मांसंच यो अङ्क्ते स्वार्थ पाकानमेव अव

^{🐞 &#}x27;पकान' ऐसा पाठ उत्तम है।

तद्तं 🏖 महापापी × मामुयाचन्द्रपातकम् ९२ । इति ब्रह्मवैवर्तेपुराण शकृतिखण्ड श्रम्याय ५८।

नोट — जब कि मांस खाने वाले को दान देने वाला महापापी है तो मांस खाने वाला उससे बड़ा महापापी होना चाहिये।
हिंसकों का प्रायश्चित वेदों ने नहीं कहा यथाः —
प्रायश्चितं हिंसकानां न वेदेषु निरूपितम् ८२ी।
इति ब्रह्मवैवर्त पुराण गणेशखण्ड अध्याय २५।

तथा-

प्रायश्चिते हिंसकानां न वेदेषु निरूपितम्। वुषे समुचिते तेषामित्याः कमलोद्भव । इति शब्दकल्पद्रुम ब्राह्मणशब्दान्तरगत।

हिंसक ब्राह्मण के मारने में कुछ दोष नहीं है और न उसके बारने में ब्रह्महत्या लगतो है। शर्त यह है कि हिंसक ब्राह्मण, ब्राह्मण हो ही नहीं सक्ता चाहे वह विधि से या वे विधिसे किसी प्रकार हिंसा करें यथा:—

 ^{&#}x27;तहानो महापापी, ऐसा पाठ उत्तम है। × १४ पृष्ठ का
 ३४ ऋोक भी देखी।

स्रात्मानं इन्तु मायान्तमिव वेदान्त पारगम् । न दोषो इनने तस्य न तेन ब्रह्म हा भवेत् । इति शब्दकल्पद्रुम ब्राह्मग् शब्दान्तरगत ।

एक के मारने में अनेकों को सुख हो तो उसके मारने में पुरुष है यथाः—

तत्रे कस्मिन्त्यं नीते चहुनां तु सुखं भवेत् । तस्य दिसा कृतं नृनं वहु पुराय प्रदा भवेत् ७९ । इति देवीभागवत स्कंघ ७ अध्याय २५।

नोट-२२ पृष्ठ का २६ ऋोक भी देखो। मनु ८। २८६-२८७-२९७। हिंसते ति हिंसाया दोषाभावो यथाः-

. S कुएडिलिया — लङ्का के त्राति नीच वे निश्चर किलयुग बीच। दरमङ्का मैथिल* भये करें कर्म त्राति नीच।

 जो मैथिल मांसादि श्रमच्य मच्चण करते हैं उन्हीं को निश्चर समामा जाय। न कि श्राचारी वैष्णव (ब्रह्म के जानने बाले) जीवों पर दया करने वाले सज्जन मैथिल। कृते पित कृतं कुर्यात् हिंसते पित हिंसितम् । न तत्र दोषं पश्यामि दुष्टे दोषं समाचरेत् । इति शब्दकलपदुम हिंसा शब्दान्तरगत गारुडे ११५ । ४७ ।

> करें कम अति नीच मीन को जीती खाते। फड़फड़ात अति दीन दुष्टतन द्यान साते। दाँतन खींचें खाल खाँच खस्सी को बंका। यह भारत के बीच भयो दरभङ्गा लङ्का २१। बकरी वचा से कहै सुनहु लाल मम् बात। तुमरे वैरी इत बहुत करिहें कबहूँ घात। करिहें कबहूँ घात बसें हम मैथिल टोली। न जानें कब खायँ मार के आँतें खोली। तुम्हें पियावत दूध खायँ हम पाता पकरी। कैसे तुम्हें बचायँ एक अबला हम बकरी ५१। बचा बकरी से कहै माइ पिलाबो दुध। हमें लुटारो गोद में सोवें आँखें मूँद। सोवें आँखें मूँद गोद तुमरी डर नाहीं। माता तुमरे रहित हमें नहिं कोई खाहीं।

नोट—"80 पृष्ठ के १२ मन्त्र से भी यही बात निकततीं है कि-मांस खाने वालों को मारने में कोई दोष नहीं है, क्यों कि ऐसे लोगों के मारने से अनेक जीव मरने से बचते हैं। जब कि मछली खरसी के मारने खाने में दोष नहीं है तो मछली खरसी के मारने खाने वाले के मारने में भी दोष नहीं है, क्योंकि आत्मा सब की बराबर है। और आँख से देखने में भी आता है।"

मांस शब्द का यह ऋर्थ होता है कि इस लोक में मैंने जिसको खाया है वह मुक्ते परलोक में खायगा यथाः—

मां स अश्वितोमुत्र तस्य मांस मिहाबचहम्। एतन्मांसस्य मांस त्वं प्रवृन्ति मनीपिणः ५५। इति मनस्मृति अध्याय ५।

मोट महाभारत अनुशासनपर्व अध्याय ११६ श्लोक ३४ से ३७ तक देखो ।

किल्युग में ब्राह्मण मछली मांस खायँगे और पापी होंगे यथा।—

रोकर माता कहै प्रेम जिसका नहिं कचा। जब मारहिंगे नीच तुन्हें का करिहों बचा ५२। इति वाममैथिलपरिचय से उद्भृत। मत्स्यामिषेण † जीवन्ति दुइंतश्चाप्य जीविकाम् । घोरं कित्रयुगे विष्य सर्वे पाप रता जनाः ४० । इति नारदीयपुराण पूर्वखण्ड अध्याय ४१ ।

पर स्त्री हिंसकाश्रेव गोत्र विक्रयियो डिजाः २५। इति पद्मपुराण क्रियायोगसारखण्ड अध्याय २६।

फिल्युग में त्रह्मवादी सुरापी होंगे यथाः -

सुरापा ब्रह्मवादिनः ३४।

इति ब्रह्मपुराण अध्याय १२३ ।

कित्युग में ब्राह्मण रूप में राज्ञस होंगे श्रीर मांस खायँगे भच्याभच्यी होंगे भूठ वत करने वाले पाखण्डी होंगे श्रीर राजा कर्णवेदी + होंगे यथाः—

विष रूपेण रक्षांसि राजानः कर्णवेदिनः । क्रव्यादा ब्रह्मरूपेण सर्व भक्ष्या द्वया व्रताः ५६ । इति ब्रह्मपुराण ऋष्याय १२३ ।

† दोहा—सहवासी काची तिलें पुरजन पाक प्रवीन।
काल चें प कैसे करें तुलसी खग मृग मीन १।

ं- कान की सुनी बात मानना।

पासंडिनो द्विज जना दृपलातृदेवाः ३८। इति भागवत स्कंध २ अध्याय ७।

श्चर्य — कित में ब्राह्मण पालरखी श्चीर राजा शूद्र होंगे ३८ । अ सब लोग श्वपने भोजन में मछली ही खांयगे श्चीर श्चमच्याहारके दोष से एक वर्ण हो जांयगे यथाः —

> श्रभक्ष्याहार दोषेण एकवर्णागताः प्रजाः। तेऽपि मत्स्यानः हरन्तीह त्र्याहारार्थश्च सर्वशः ७७३४ इति मत्त्यपुराण श्रन्याय १४४।

श्रु अन्तः शाक्ता विहरीवः सभामद्धे च वैष्णवः।
 नाना रूप घराः कौला विचरित महीतले।
 अश्रु वाह्मण यदि मछली खाले तो ३ दिन उपवास करके शुद्ध होता है यथाः—

मत्स्यांश्च कामतो जम्बा सोपवासस् ज्यहं वसेत् १७५।
इति याज्ञवल्कय स्मृति श्रद्ध्याय १।
सत्स्यांश्च कामतो मुक्त्वा सोपवासरूयहं वसेत्।
श्रायश्चित्तं ततः कृत्वा शुद्धिमाप्नोति वाडवाः २८।
इति ज्ञह्मवैवर्तपुराण ब्रह्मखण्ड श्रद्ध्याय २७।
ई७ पृष्ठ की ६ पक्ति से ८ पक्ति तक भी देखो।

किलयुग में सब मनुष्य चोर हिंसक फूठा कपटी होंगे श्रीर बिना तुलसी के पूजा करेंगे वाममार्गी होंगे श्रीर बाम मंत्रों की डपासना करेंगे यथा:—

वामाचार रताः सर्वे मिथ्या कापत्य संयुताः।
तुलसी वर्जिता पूजा भविष्यति ततः परम् १६।
चौराश्च हिंसकाः + सर्वे भविष्यत्ति ततः परम् १८।
इति बहावैवर्तपुराण प्रकृतिखंड अध्याय ।

बाममंत्रोपासकश्च चतुर्वर्णाश्च तत्पराः २३। इति ब्रह्मवैवर्ते पुराण श्रीकृष्णजनमखरह श्रध्याय १२८।

ति अति पंथ वामपथ चलही ।

बंचक बिरचि वेषु जग छलही १६८ ।

इति मानस रामायण अयोध्याकांड ।
कलियुग में चारों वर्ण एक वर्ण होजायँगे वथाः—

एकवर्णा भविष्यन्ति विषयार्थ कलौ जनाः ३६ ।

एकवर्णा भविष्यन्ति वर्णाश्चत्वार एवं च ३८ ।

इति पद्मपुराण क्रियायोगसारखंड अध्याय २६ ।

[🕂] पर हिंसा परायणाः १०। इति अध्यातमशमायण बाल-कांड सर्ग १।

कितयुग में शुद्र ! ब्राह्मण का आचार करेंगे और ब्राह्मण ! शुद्र का आचार करेंगे यथा:—

श्र्द्रस्य वाह्मणाचाराः श्र्द्राचाराश्र वाह्मणाः ४२ । इति वह्मारहपुराण पूर्वभाग अनुषंगपाद अध्याय ३१।

कित्युग ने सब धर्मी का नाश कर दिया इसके प्रभाव से मनुष्य पाप में रत होगये और पाप करके लोग दुखी होगये सब पासरडी होगये वर्णशंकर होगये यथाः—

सो कलिकाल कठिन उरगारी,
पाप परायन सब नर नारी।
किलिमल ग्रसे धर्म सब गुप्त भये सद्ग्रंथ।
दंभिन निज मित कलिए किर मगट किये बहु पंथ।
भये लोग सब मोह बस लोभ ग्रसे सुभ कर्म ९७।
भये वरनसंकर सकल भिक्त सेतु सब लोग।
करिह पाप पाविह दुल भय रुज सोक वियोग १००।
सुन खगेस कलि कपट हठ दंभ द्रेष पाखंड।
मान मोह मारादि मद ब्यापि रहे ब्रह्मंड।
तामस धर्म करिह सब जप तप मख ब्रत दान।
देव न बरषिह धरिन पर बये न जामिह धान १०१।

बरनाश्रम धर्म विचार गये १०२। इति मानसरामायण उत्तरकांड।

कित्युग प्रभाव से हिन्दू शब्द का अर्थ ही नष्ट होगया। हिन्दू शब्द का यही अर्थ होता है कि जिसमें कोई दूषण न हो स्थाः—

> हीनं दूषयतीति हिन्दुः । इति शञ्दकलपद्भुम हिंदू शब्दान्तरगत ।

होनश्च दूषयत्येव हिंदुरित्युच्यते प्रिये। इति शब्दकल्पडुम हिंदू शब्दान्तरगत मेरुतन्त्र प्रकाश ३३ का बचन ।

धर्म हानि होने से नरक होता है यथाः—

थर्म हानिर्नराणां हि नरकाय भवेत्पुन: ४३।×

इति देवीभागवत स्कंघ २ अध्याय १२।

× वर्गाश्रम विरुद्धं च कर्म कुर्वैति ये नराः। कर्मणो मनसा वाचा निरयेतु पतंति ते २४। इति शिवपुराण उमासंहिता श्र-श्वाय १६। जब मनुष्य धर्मकी रज्ञा करता है तब धर्म उसकी रज्ञाकरता है यथा—धर्म एव हतो हंति धर्मोरज्ञति रज्ञितः।

स्ववर्ण धर्म का पालन करने से ही सब प्रकार सिद्धिलाम करते हैं, श्रोर विरुद्ध श्राचरण करने से ही नरक जाते हैं यथाः— स्ववर्णधर्मात् संसिद्धि नरः प्राप्नोति न च्युत । प्रयाति नरकं पेत्य प्रति सिद्धिनिशेंबणात् ९। इति मार्कण्डेय पुराण श्रध्याय २५।

नोट-चारों वर्ण भगवत ने रचे गीता ४। १३।

कित्रिया में मनुष्यों का नाश जल्दी क्यों हो जाता है यथाः— श्रव्य प्रज्ञा तथा लिंगा दुष्टान्तः कर्णाः कर्तो । यतस्ततो विनष्ट्यंति कालोनाल्पेन मानवाः ४३ ।

इति ब्रह्मपुराग् श्रध्याय १२२ ।

नोट--कूर्मपुराण उत्तरार्छ अध्याय १६ ऋोक २१-२२ भी देखो।

बंगाली ब्राह्मण, मैथिल ब्राह्मण श्रीर कान्यकुञ्ज ब्राह्मण ही विशेष कर देवी. श्राद्ध श्रीर श्रनेकानेक यज्ञों में बराबर पशु बिल देते हैं श्रीर सामान्यता भी मांस मझली खाने में बीर हैं।

यदि इनको मुदीं का खानेवाला पिशाच गीध वा जंबुक

तस्माद्धर्मो न हन्तव्यो मानो धर्मो इतो ऽ वधीत् १५ इति मनुस्मृति अध्याय ८। कहा जाय तो इसमें क्या बाधा है। शास्त्रानुसार तो बिलकुल ही ठीक है और प्रत्यच में भी देखा जाता है। इनके घर को श्मशान पेट को कबुर और मुख को मल मुद्दी आदि के फैंकने के मकान का दरवाजा भी कह सक्ते हैं

वंगालियों के विषय में यथाः—

स्थाने सिंह समा रणे मृगसमाः स्थानान्तरं जंबुकाः। श्राहारे वक काक शूकर समाश्रद्धागोपमा मैथुने। रूपे मरकटवत् पिशाचवदना क्रूराः सदा निर्देशा। वंगीया ने यदि मानवा हर हर प्रेताः पुनः की हशाः।

श्रथं—अपने स्थान में सिंह की भांति स्थिति करनेवाले, रण में मृग की तरह भागनेवाले, दूसरे के स्थान में जंबुक के ऐसे दब के रहनेवाले, बगला काक और सुवर की तरह अभद्य खाने वाले, विषय (क्षी) के सेवन में खस्सी (बकरा) ऐसे, बन्दर की सहश रूप वाले, पिशाच ऐसे सुखवाले, कूर स्वभाववाले, बिल-कुल दया से रहित, यदि ऐसे मांस भद्दी कुत्सित ब्यवहार करने

⁺ सिंधु सौबीर सौराष्ट्रं तथा प्रत्यन्त वासिनः। कलिङ्ग कौङ्कणान्वङ्गान्गत्वा संस्कारमहीति १६ इति देवल स्मृति। धर्थ-धिंबु, सौबीर, और सौराष्ट्रदेश के तथा इनके निकट के

वाले बंगाली लोग मनुष्य कहे जावें तो फिर प्रेतों में किसकी गणना होगी, अर्थान् यही बंगाली! मनुष्य रूपसे प्रेतगण हैं। मैथिलों के विषय में यथाः—

श्रवतार त्रयं विष्णोर्मेथिलैः कवली कृतम्। इति संचिन्त्य भगवान नारसिँहं वपुर्वधौ।

निवासी कितङ्ग (उड़ीसा), कौङ्कण (कोङ्कण) और वंगाल में जाने पर पुनः संस्कार के योग्य होते हैं १६। अवन्तयो ऽङ्गमगधाः सुराष्ट्री दिचिणा पथाः। उपावृत्सिन्धु सौवीरा एते सङ्कीर्ण योनयः ३१। आरट्टान्कारस्करान्पुर्ण्ड्रान्सौवीरान्वङ्गकिलङ्गान्प्रानृ
नानिति च गत्वापुनस्तोमेन यजेत सर्वपृष्ट्या वा ३२। अथाप्युदाहरन्ति ३३। पद्भ्यां स कुरुते पापं यः कितङ्गान् प्रपद्यते। ऋषयो निष्कृति तस्य प्राहुवेरवानरं हिवः ३४ इति वौधायनस्मृति प्रश्न १ अध्याय १। अर्थ — अवन्त, अङ्ग, मगध, सौराष्ट्र, दिस्णापथ, उपावृत्, सिन्धु और सौबीरदेश, यह सब संकीर्ण योनि हैं ३१। आरट्ट, कारस्कर, पुर्ण्ड्र सौवीर, वङ्ग (बङ्गाल), किलग(उड़ीसा), और प्रान्नान देश में जानेवालों को अपनी शुद्धि के लिये पुनस्तो मेन अथवा सर्वपृष्ठया मंत्र से यज्ञ करना चाहिये ३२। जैसा कि उदाहरण देते हैं ३३। कितङ्ग अर्थात् उड़ीसा देश में जानेवाला दानों पावों से पाप करता है, महर्षियों ने उसकी शुद्धि के लिये वैर्थानरेष्टो यज्ञ कहा है ३४।

अर्थ — विष्णु भगवान पहिले मत्स्य कच्छ और वाराह रूप से पृथ्वी में प्रगट हुए, किन्तु उनको मैथिलों ने खाडाला-तब तो भगवान ने क्रोध करके नारसिंह शरीर को धारण किया, यदि मैथिल उसको खाते तो स्वयं ही भन्ति होजाते।

"पंडित श्रवरज इक बड़ होई, इक मर भुए श्रम्न निहं खाई इक मर सीम रसोई १ किर स्नान तिलक किर बैठे नौगुष्म कांध्र जानेऊ हांड़ी हाड़ हाड़ थारी मुख श्रव षट् कर्म बनेऊ २ धरम क्ये जह जीव वधे तह श्रकरम कर मेरे भाई जो तोहरे को ब्राह्मण कहिये तो केहि कहिये कसाई ३ कहें कबीर सुनो हो संतो भरम भूलि दुनियाई श्रपरमपार पार पुरुषोत्तम यह गति बिरले पाई ४ शब्द ४६ इति कबीर बीजक । षट्कर्म—हांड़ी में हाड़ १ श्रारी में हाड़ २ हाथ में हाड़ ३ मुख में हाड़ ४ पेट में हाड़ ५ गुदासे हाड़ ६ । बनावे १ बनवावे २ परोसे ३ परोसवावे ४ खावे ५ खवावे ६ श्रक्यापनमध्ययनं यजनं याजनं तथा। दान प्रतिप्रहरचेव षट्कर मांच्यप्रजन्मनः ७५ इति मनुस्मृति श्रध्याय १० । क्रूमेपुराणपूर्वा इक्ष्याय २ श्लोक ३९ भी देखो।"

कान्यकुन्ना द्विजाः सर्वे सूर्या एव न संशयः। मीन मेषादि राशीनां भोक्तारः कथमन्यथा। श्राराय यह है कि जैसे सूर्य मीन मेगादि बारह राशियां को भोगते हैं तैसे ही कान्यकुब्ज बाह्यण मीन मेगादि जानवरों को खाजाते हैं।

शिकार खेलने वालोंकी दुईशा-अर्थात् जिस प्रकार शिकारी, जानवरों को मारते हैं, वह भी दसी प्रकार नरकों में यमदूतों से मारे जाते हैं यथा-

ये त्विहते श्वगर्वभवतयो ब्राह्मणादयो मृगय।विहारा
श्रातीर्थे च मृगान् निघ्नन्ति तानिष समेताँख्लक्ष्य भूतान् यमपुरुषाइषाभिविध्यन्ति २३ । ३१ से ३३ श्लोक तक देखो।
इति भागवत स्कन्ध ५ श्रध्याय २६ ।

नोट-"शिकार खेलने के विषय में मनुस्मृति अध्याय ७ श्लोक ५०,अध्याय ५ श्लोक ५२ और यजुर्वेद अध्याय १३ मन्त्र ४७-४८ देखो । जो मनुष्य बल से पराये के राज्य (शरीर से बड़ा कुछ नहीं है) को जीत लेता है वह शूर नहीं होता, किन्तु जिसने इन्द्रियों के ग्राम को जीता है बुद्धिमान लोग उसी को शूर कहते हैं। देखो दत्तस्मृति अध्याय ७ श्लोक १९ और व्यासस्मृति अध्याय ५ श्लोक ५८ से ६० तक ।"

बिल शब्द का अर्थ-सेंट और पूजा होता है यथाः-

विजया विम्नुखो राजा अन्त्रै तदनुयाति यान्। विज्ञितस्मै हरन्त्यग्रे राजानः पृथवे यथा ३६। इति भागवत स्कंघ ४ अध्याय २३।

नव कुंकुम किं जलक मुख पङ्कज भूतयः । बिखिभिस्त्वरितं जग्मुः पृथु श्रोएयश्रवत्कुचाः १० । इति भागवत पूर्वाई स्कन्ध १० श्रध्याय ५। "विति पूर्जोपहारे च" यह धातु भी है ।

'अपना ही विल देवतों को देवो तो तुम्हाराभी नाम विल पड़ जायगा, जैसे कि राजा बिल ने भगवान को अपने शरीर और सर्वस्व को बिल दिया, इसी वास्ते उनका नाम बिल पड़ा, देवतावों को दूसरे के शरीर का बिल देना महापाप है और बिल देने बाला वा दिलाने वाला दोनों महामृद् हैं और महा नारकी हैं। भगवत औतारों और ऋषि मुन्यों की बराबरी मांस खाने में करते हैं, परम्तु उनके कर्म की बराबरी नहीं करते उनमें तो बो भी शिक थी कि चाहें तो इन्द्र को नीचे गिरादें (सहेंद्रस्तच को विशा नारनी किमिति पात्यते २० इति भागवत स्कन्ध १२ अथ्याय ६। १६ से २४ श्लोक तक देखों) भला तुममें भी वह शिक है।" आतम्भ राब्द् का अर्थ-स्पर्श होता है यथाः-

श्रात्म पु॰ श्रा + लभ—घन् सुम। संस्पर्शे। वर्जियेदित्यनुषद्गे (इति तारानाथ तर्कवाचस्पति भट्टाचा-र्येण सङ्कालितम् वाचस्पत्य—वृहत्संस्कृताभिधानं चतुर्थ खएड संवत् १९३१ का छपा)।

"स्त्रीणाञ्च प्रेत्तगालम्भमुपवार्तं परस्य च इति मनुस्मृति अध्यायः २ म्लोक १७९."

यद्घाण भक्षो विहितः सुरायास्तथा पशोरालभनं न हिंसा । एवं व्यवायः प्रजया न रत्या इपं विशुद्धं न विदुः स्वधर्मम् १३ ।

येत्वनेवं विदो ऽसन्तः स्तन्धाः सद्भिषामिनः । पश्चन दुर्यन्तिविसन्धाः पेत्य खाद्गन्ति ते च तान् १४) इति भागवत स्कन्ध ११ श्राच्याय ५।

बाहुमसारपरिरम्भकरालकोरुनीवीस्तनालभननर्भ न-स्वाग्र पातै: । क्ष्वेल्या ऽवलोकहिसतैर्वज सुंदरीखाम्रुचम्भय-स्नतिपतिरमयांचकार ४६ ।

इति भागवत स्कन्ध १० पूर्वार्ड अध्याय २९।

भात्मा के ८ गुरा यथाः—

अष्टावात्म गुणास्तिस्मन्पधानत्वेन संस्थिताः। दयाः सर्वेषु भूतेषु क्षान्ती रक्षा तुरस्य तु ८। अनस्या तथा लोके शौद्यमन्तर्वहिर्द्धिनाः। अनायासेषु कार्येषु माङ्गल्याचार सेवनम् ९। न च द्रव्येषु कार्यययमार्तेष्यार्जिनतेषु च। तथा ऽस्पृहा पर द्रव्ये पर स्त्रीषु च सर्वदा १०। अष्टाबात्म गुणाः भोक्ताः पुराणस्य तु कोविदैः। अयमेव कियायोगो ज्ञानयोगस्य साधकः ११।

श्रयाष्ट्रावातम गुणाः दया सर्वभूतेषु श्रान्तिरनस्या। शौचमनायासौ मंगलयकार्पणयमस्वहेति। × इति गौतमस्वृति अध्याय ८।

× परन्तु श्रयोध्या श्रीसीतारामग्रेस के मालिक श्रीमान् बाबू गिरिजादयालु जी (बुध-कवि) श्रात्मा के ११ गुगा बतावे हैं यथा:—

दोहा - क्रम मन बच हिंसा तजै सब पर दया समान। स्थादर सब विधि सबन को सहै मान सपमान १। कर्णाश्रम के ८ गुगा गथाः— सत्यं शोचनिहंसा च श्रनसूया तथा क्षमा । श्रानृशंस्यमकार्पएयं सन्तोषश्राष्ट्रमो गुणः ३२ । इति मार्कण्डेयपुराण श्रध्याय २५ ।

परमदिप्ति का कारण और मुख देनेवाली बस्तु यथाः — विद्येका परमातृप्तिरहिंसेका सुखावहा २९ । इति महाभारत उद्योगपर्व अध्याय ३३।

धन कमाने की श्रक्त यथाः — यत्र धर्मस्तयैवार्थः २९ ।

इति महाभारत शान्तिपर्वे अध्याय ५९।

शीच शान्ति अनस्य अरु भच्य अलिप्सा सोय।
"बुध" अनआलस देह सुख अनायास सो होय २।
अहे आत्मा केर गुए। ये ग्यारह सो जान।
"बुध" सो बुधवर जानते ज्ञानखानि गुएवान ३।

आपकी प्रसंशा में किञ्चित-

दोहा-कविवर "बुघ" बुघ खानि हैं विद्या में संपन्न। जिनकी तर्क तरङ्ग में रात्रू वह भये खिन्न १। (नागर) मुक्त होने की अक्रल यथाः—

आत्मवत्सर्व भूतेषु यश्रव्धियतः श्रुचिः । अमानी निर्भीमानः सर्वतो मुक्त एव सः ३ । इति महाभारत आश्यमेधिकपर्व अध्याय १९।

नोट—"मनुस्मृति अध्याय १२ रत्नोक १२५ देखो।"
मोत्त कैसे नहीं होती और कैसे होती है इस पर विचार यथाः—
न शब्दशास्त्रभिरतस्य मोक्षो न चैव रम्यावस्य पियस्य।
न भोजनाच्छादन तत्परस्य न लोग चित्त ग्रहणे रतस्य ६।
एकान्त शोलस्य दृढ व्रतस्य मोक्षो भवेत्पीति निवर्तकस्य।
ऋष्यात्म योगै करतस्य सम्यङ मोक्षो भवेत्रित्यमहिंस्यकस्य।
इति आपस्तम्बस्मृति अध्याय १०।

त्रहा बनने की अक्षल यथाः —
सर्व भूतेषु चा ऽऽ त्मानं सर्व भूतानि चा ऽऽ त्मिन ।
यदा पश्यित भूतात्मा ब्रह्म संपद्मते तदा २२।
इति त्रह्मपुराण श्रध्याय १२८।

अयात्म व्यतिरेकेण द्वितीयं नैव पश्यन्ति।

व्रह्मभूतः स एव इ दक्ष पक्ष उदाहृतः १२ । क्ष इति दत्तस्मृति अध्याय ७। नैव चिन्त्यं न चाचिन्त्यं न चिन्त्यं चिन्त्यमेव च । पक्षपात विनिर्मुक्तं व्रह्म सम्पद्यते ध्रुवम् ६ । इति त्रिपुरातापिन्युपनिषद्, उपनिषद् ५ और ब्रह्मविंदू उपनिषद् श्रुति ६।

यदा सर्वाणि भूतानि स्वात्मन्येव हो पश्यति । सर्व भूतेषु चात्मानं ब्रह्म सम्पद्यते तदा ७९ । इति श्रत्नपूर्णोपनिषद् श्रध्याय ५। नोट-गीता १३ । ३० में भी ब्रह्म बनने की श्रकत लिखी है।

जो मनुष्य प्राणियोंको अपने सरीखा और दूसरे के द्रव्य को मही के देले के सरीखा देखता है वही देखता है! और सब

क्ष बेद शास्त्रार्थतत्वज्ञो यत्र तत्राश्रमेवसन् । इहैव लोके ति-ष्टन्स ब्रह्म भूयाय कल्पते १०२ इति मनुस्मृति अध्याय १२। अर्थ—वेदशास्त्र का अर्थ और तत्व को जानने वाला पुरुष किसी आश्रम में निवास करें इसी लोक में ब्रह्मत्व लाभ करता है १०२।

श्रन्धे हैं यथाः—

श्रात्मवत्सर्व भूतानि पर द्रव्याणि लोष्टवत् । स्वभावादेव न भयाद्यः पश्यति स पश्यति ३८। इति श्रन्नपूर्णोपनिषद् श्रम्याय १।

नोट-५४ एडउ का ३३७ श्लोक भी देखो।

जो जीवों को दुख देते हैं वह ब्रह्म को ही दुख देते हैं क्योंकि ब्रह्म ही जीवरूप से माया का साथ करके पैदा हुआ है। जैसे पित वीर्यरूप से भार्यों के शरीर में प्रवेश करके पुत्ररूप से जन्मता है, इसी हेतु भार्यों का भी जाया नाम होताहै क्योंकि खीं से पुरुष ने पुनरवार जन्म लिया यथा:—

पतिर्भार्या संप्रविष्ट्य गर्भी भृत्वेह जायते। जायायास्तद्धि जायात्वं यदस्यां जायते पुनः ८। . इति मनुस्मृति अध्याय ९।

सुकति पुरुष यथाः—

न नृशंसा न पिशुना न कृतन्ना न मानिनः। सतायस्तपः स्थितौः शूरा द्यावंतः क्षमापरः ७। इति पद्मपुराण सूमिखरुड अध्याय ९५। वैवलोक जाने की श्रक्ताः—
धर्म भनस्य सततं त्यन भूत हिंसा,
सेवस्व साधु पुरुषान् जिहि काम शत्रुम् ।
श्रन्यस्य दोष गुण कीर्तनमासु हित्वा,
सत्यं वदार्चय हरिं त्रंज देवलोकम् १६५।
इति पद्मपुराण उत्तरखण्ड अध्याय १२०।

धर्म के १० शत्रु यथाः-

श्रालस १ शरम २ दीघ्रसूत्रता ३ श्रासावधानता ४ श्रामान्यार ५ बेबिचार ६ मूर्खता ७ मांस मछली लहसुन प्यांज खाने-वाले, नशाबाज श्रीर भूठ बोलनेवालों (बकीलादि) की संगत ८ शारीर का रोग ९ मानसीरोग १०।

धर्म के १४ मित्र यथाः -

उद्योग १ विद्या २ निरालस ३ सावधान ४ विचार ५ सजनों की संगति ६ पवित्रता ७ शुद्ध अन्न वा शुद्ध फलफूलं का भोजन ८ एकान्तवास ९ सत्य बोलना १० किसी जीव को दुख देने का विचार मनमें न उठाना ११ आरोग्यता १२ आचार विधार १३ दिन निकलनेसे पहिले भगवत आराधन १४। दोहा—गुरुधर शकर × तीर पर गाड़ द्वारा प्राम। जन्मभूमि मम सिंहपुर जहुँ श्रीपति का धाम १।

नरसिंहपुर इन कर जिला मध्यप्रदेश प्रदेश ह गोलापुरव जाति में जन्म भयो है लेश २। जानकीवल्लभदास श्ररु नागर जानहूँ नाम। चित्रकूट में बैठ के पुस्तक लिखी ललाम ३। त्रेपन शुचि निज वयस में प्रन्थ सहित परमान। नागर विरच्यो नागरिक बुधजन के कल्यान ४। ब्रह्म योग निधि चंद्रमा (१९८१) समा विक्रमी येह । 🕏 फागुन पूनो को लिखा देत श्रहिंसा नेह ५। यह बिलदोन निषेध जो पिंढ़ हैं सहित समेह । तेहि के घर सुख संपदा नित बरसे जिमि मेह ६। सोरठा- ब्रन्थकार नामादि, बाम जिला दोहा तले। अत्तर प्रति पद आदि, एक एक लेवहु सुबुध १। दोहा—जागहु हिंसक तनक तुम, नहीं नी द में सीय। कीजे तनक विचार मन, बहुत अशुचि का होय २। लघु बकरी का बाल तज, भली तजो पाठीन। दान जीव दो दुहुन को, सब बिधि ये अति दीन ३।

श्रङ्केषु शून्य विन्यासाद्वृद्धिः स्यातु दशाधिका ।
 तस्माज्ज्ञेया विशेषेण श्रङ्कानां वामतो गतिः ४८ ।
 इति समयोचितपद्यमानिकास्थः अकारः ।

सिंह बने गज को डरत, हनत बकरिया बात ।
पुरय नाश कीन्हें सकत, रहे कात के गात ४।
जिधर जावगे तिधर ही, लागेगी तन आगं।
नहीं खान को मिलहिगो, रजगर वथुवा साग ५।
सिंधु दया के मत बनों, हरो न पर की पीर।
पुरय करहु न ११ पाप तज, रहनि रहो यहि धीर ६।

नाम संकीर्तनं यस्य सर्वे पाप प्रणासनम् । पणामो दुःख शमनस्तं नमामि इरिं परम् २३ । इति श्रीमद्भागवत स्कन्ध १२ अध्याय १३ ।

इतिश्री, श्रीवैष्णव, परमहंस जानकीषञ्जभदास (नागर-कवि) ृष्टत—समाहृति चिल्रदान निषेघ समाप्तः ।

> इरि: ॐ तत्सद्रामेति । श्रीहिंसकार्पणयस्तु । काल्युन पूर्णिमा सम्बत् १९८१ विक्रमीय । सदस्भूयात् ।

श्राज तक जो नवीन पुस्तकें मैंने वनाई श्रीर दीका की हैं उनके नाम।

+१ गोलापूर्वोत्पत्तिमार्तण्ड । +२ जानकीबल्लभवाराखड़ी । ३ मुद्रा मार्तण्ड । ४ वेदान्त कल्लोल । ५ जगत प्रवोध । + ६ राममन्त्रार्थ। 🛧 🤰 रामविषय । 🕂८ ईश्वरबालबोध । ६ मत्स्यपुराणांतरगत नमंद्र माहात्म्य भाषाटीका । १० नमेदाएक भाषाटीका । +११ हिस्सर् नाहातम्य । 🕂 १२ प्रयागमाहातम्य ।१३ कुंस माला । 🕂१४ स्रोमपती अमावस माहातम्य । १५ एकादशी माहातम्य । १६ बद्रीनाथ. माहातम्य । १७ वदरीनाथाष्टक । १८ खटपटपंजरिका । १६ भहिं लाआ दर्श। २० चूत [जुवा] निषेव । २१ कन्या वेश्वना निषेघ। २२ नारीधर्म । २३ धर्मकुसुम (पुत्रशिक्षा)। २४ नरावख + २५ वपपंचक । २६ दानादशे । २७ वाममैथिल परिचय । २८ श्वंगार प्रवृत्ति नाटक। २६ रामनाम मणि दीप व्याख्या। ३० गुरू शिष्य विवरण चंद्रिका । ३१ तुलसीकृत रामायण विषय सुचौ। ३२ निर्माल्यबोध । + ३३ वलिदाननिषेध : + ३४ देबीवलिपासण्ड । ३५ बनिया । ३६ शीसीताराम उपासना रहस्य । ३७ रेवाष्ट्रक । ३८ दिसा तर्कावली।

मार्गशीर्षकृत्ण१३) प्रस्थकार— सम्बद्ध १९६२ वि॰) प्रमिष्ठंस-जानकीववलभदास (नागर-कवि)

चित्रकृट, जिला बांदा (यू०पी०)

